Chapter-5

पंचम अध्याय — यात्रा साहित्य

वस्तु, उपलब्धियाँ, शिल्प तथा निष्कर्ष ।

यात्रा साहित्य

यात्रा-साहित्य क्या है ?

जब लेखक अपने जीवन की अविस्मरणीय यात्राओं का विवरण आत्मकथात्मक शैली में व्यक्त करता है, तब वह "यात्रा साहित्य" की सृष्टि करता है । आदर्श यात्रा वृत्त वह माना जाता है, जिसमें यात्रा-क्रम में आये हुए स्थान और बीती हुई घटनाएँ लेखक की स्मृति संवेदना का अंग बनकर चित्रवत् अंकित होती जाती है । यात्रा-वृत्त आत्मकथा का अंश भी हो सकता है एवं स्वतंत्र रूप से भी लिखा जा सकता है । यात्रा-साहित्य के अन्तर्गत "आत्मकथा", "संस्मरण" तथा रिपोर्ताज" तीनों ही गद्य - विधाओं के तत्व समाहित होते हैं ।

हिन्दी में यात्रा-साहित्य अथवा यात्रा वृत्त लेखन का क्रम प्रमुख गद्य-प्रवर्तक भारतेन्दु हरिश्चन्द से प्रारम्भ होता है किन्तु कलात्मक यात्रा वृत्त छायावाद और छायावादोत्तर युग में लिखे गए प्रतीत होते हैं । इस क्षेत्र में राहुल सांस्कृत्यायन, देवेन्द्र सत्यार्थी, कविवर अज्ञेय, यशपाल, डा0 नगेन्द्र, मोहन राकेश, निर्मल वर्मा आदि के द्वारा प्रस्तुत यात्रा-साहित्य उल्लेखनीय है । इस दिशा में गोविन्द मिश्र का भी स्तुत्य प्रयास रहा है, क्योंकि उन्होंने यात्रा-साहित्य पर तीन कृतियाँ हिन्दी-साहित्य को उपलब्ध करायी हैं - ये हैं -

1- धुन्ध भरी सुर्खी, 2- दरख्तों के पार....शाम और 3- झूलती जड़े ।

गोविन्द मिश्र के यात्रा-साहित्य के सन्दर्भ में श्री ओम प्रकाश सिंह ने लिखा है - "यात्रा - संस्मरण लिखने में एक बड़ा जोखिम रहता है, जहाँ की मिट्टी के पंचतत्वों से आप बाकिफ हों और जहाँ के जन-जीवन को आप उनकी भाषा में समझ सकें, उनमें बोल-बतियाकर कुछ गहरे धँस सकें, वहाँ तक तो सब ठीक रहता है, लेकिन जैसे ही दृष्टि एक ऐसे अनजाने

इंग्लैण्ड के मध्य स्थापित ऐतिहासिक श्रृंखला भी सरलता से विच्छिन्न होने वाली नहीं क्योंकि अब भी भारतीयों और अंग्रेजों के बीच एक आभिजात्य है । गोविन्द मिश्र भी इस पूर्वाग्रह से मुक्त नहीं दिखाई देते हैं । फिर भी अपनी नयी दृष्टि से मिश्र जी ने जो नवीनता प्रस्तुत की है, उसमें वे काफी सफल लगते हैं तथा पाठकों के लिए भी पर्याप्त सामग्री जुटा पाने में वे सक्षम लगते हैं ।

यात्रा वृत्त का प्रारम्भ पटना में एक ज्योतिषी की भविष्यवाणी के मिथ्या सिद्ध होने से होता है एवं हिन्दुस्तानी कौम की एक परम्परा को उजागर करता हुआ वृत्त आगे बढ़ जाता है । मिश्र जी प्रारम्भ में ही लिखते हैं - "पटना के एक ज्योतिषी ने कहा था कि मैं 68 वर्ष तक जीऊँगा, तरक्की करूंगा, लिखने में प्रसिद्धि पाऊँगा....सब कुछ करूँगा मगर ....विदेश यात्रा का जोग नहीं बनता लेकिन ज्योतिष को झूठा करता हुआ लंदन जाने के लिए (मैं) पालम आ ही पहुँचा । "मैं मित्रों को बताता हूँ कि भविष्यवाणी तो दूसरी है, तो वे कहते हैं - "भाई, कर्मों से भाग्य बदल भी जाता है....रेखाएँ बदलती भी तो रहती है..... "लचीली विचारधारा और तर्कबाजी में हम भारतीयों का जवाब नहीं ।[1]

मिश्र जी ने दिनांक बार अपना यात्रा वृत्त किया है : जैसे दिनांक 23 सितम्बर, 76 की रात को अर्थात प्रातः बेला में 3.30 बजे जहाज को पालम हवाई अड्डे से छूटना था और मैं अकेला ही वायुपत्तन (एअर पोर्ट) जा पहुँचा । सुरक्षा निरीक्षण के बाद जम्बो जहाज में बैठा, मित्रों से भेंट हुई जो इसी कार्यक्रम में इसी जहाज से इंग्लैण्ड जा रहे थे । तेहरान में सुबह, बाहर निकलने की मनाही । मिश्र जी की घड़ी में 8.15 प्रातः का समय, किन्तु भारत के 6.30 बजे सुबह जैसीनम धूप । एल्पस पर्वत का दृश्य और जर्मनी जाने की तीव्र इच्छा ।

1- धुँध भरी सुर्खी - गोविन्द मिश्र पृ0 ।

क्षेत्र से गुजरती है जहाँ का ज्ञान आपके पास सिर्फ इतिहास के पॉकिट-बुक संस्करणों से हो, जहाँ आपके पास कहीं मार्ग दर्शक न हों, और जहाँ के लोगों से बोल-बतिया सकने का माध्यम आपके पास न हो, सब कुछ कुल चंद दिनों में देख-सुन लेना हो तो यात्रा-वृत्त गाइड बुक्स का पुनराख्यान भर बनकर रह जाता है । ऐसे में न लेखक का मन भरता है और न पाठक का। लगता है कि आप किसी शहर में नहीं, किसी जमीन पर नही, किसी देश में नहीं, उस देश की मीनारों और चोटियों और शीर्षों पर बे-वजह दौड़ते रहे हैं और नीचे वह सब कुछ छूट गया है, जो जीवन था ।

ऐसे में यदि कोई यात्रा वृत्त अपनी सम्पूर्ण जिज्ञासा के साथ इन गुबंदो से उतरकर जीवन में धँसने की चेष्टा करे और इन इतिहास बिन्दुओं, जन-जीवन और अपने संवेदनशील अन्तर्मन की मुक्त अन्तःक्रिया होने दें, तो वह महत्वपूर्ण इतिवृत्त बन जाता है । गोविन्द मिश्र का यह यात्रा वृत्त एक ऐसा ही अन्तःक्रिया की उपज है ।[1]

1- गोविन्द मिश्र कृत यात्रा वृत्तों की वस्तु विवेचना -

धुन्ध भरी सुर्खी -

सन् 1979 में प्रकाशित यह यात्रा वृत्त गोविन्द मिश्र का प्रथम यात्रा वृत्त है । इसमें उनके तीन महीने के ब्रिटेन प्रवास और यूरोपीय यात्रा का लेखा जोखा है यह यात्रा वृत्त है - "इंडियन काउंसिल ऑफ कल्चरल रिलेशंस द्वारा निर्धारित यूरोपीय दोरे का" और देश हैं,

फ्रांस,बेल्जियम अन्य यूरोपीय देश अपने तीन माह के पश्चिम प्रवास के दौरान गोविन्द मिश्र ने जो अनुभव किए, उन्हें बड़ी ही सफाई और संजीदगी-संवेदना के साथ पुस्तक "धुंधभरी सुर्खी" में समेटा है । इंग्लैण्ड-प्रवास पर काफी लोगों ने बहुत कुछ लिखा है, फिर भारत और

1- गुबंदों से उतरकर जीवन में धँसने की यात्रा - (गोविन्द मिश्र - सृजन के आयाम) श्री ओम प्रकाश सिंह - पृ0 324.

इसके बाद सांय 4.30 बजे लन्दन के हीथरो हवाई अड्डे पर जहाज उतरा और अप्रवासियों के लिए एक लाइन जहाँ पूछताछ की गई-क्यो आये हैं, कब लौटेंगे ? ब्रिटिश काउंसिल के एक व्यक्ति के साथ हम एक लम्बी दूरी तय करके काउंसिल कार्यालय पहुँचे । वहाँ प्रोग्राम अफसर मिसवैल विल्की आई और कोर्स (पाठ्यक्रम) पर एक भाषण दिया । एंजिल रेलवे स्टेशन के पास रूकने के लिए एक होटल में प्रबन्ध किया गया । होटल का नाम था सेंट्रल सिटी होटल ।

लन्दन की पहली सुबह, बादल और हल्की वारिश और मिश्र जी दो मित्रों के साथ घूमने निकल पड़े । आक्सफोर्ड स्ट्रीट, आक्सफोर्ड सर्कस और पिकैडली सर्कस देखते फिरे । शाम को होटल लौट कर आये । रात्रि विश्राम किया और अगले दिन 26 सितम्बर 76 की प्रातः कालीन बेला । दिन में पेटीकोट-लेन मार्केट को देखा जहाँ सघन बाजार और टूरिस्ट को आकर्षण माना जाता है, शाम को हाइड पार्क देखने निकले, जहाँ इधर-उधर भाषण चल रहे थे । एक अफ्रीकी अपने देश और देशवासियों को इंग्लैण्ड से शक्तिशाली बता रहा था । दूसरी ओर एक अमेरिकन "रैडिकलिज्म" चला रहा था । एक ओर इजराइली कुछ कह रहा था । आजादी से बोलने की छूट इतवार के दिन रहती है । इंग्लैण्ड में लज्जा वैसे ही कम है, किसी भी सड़क पर लड़के-लड़कियाँ कुछ भी करते दिखाई दे जाते हैं ।

27 सितम्बर, 76 को संस्थान में पहला दिन था । सेंट्रल सिटी होटल से करीब $1\frac{1}{2}$ मील दूर हैं, रोयल इंस्टीट्यूट ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन-कार्यालय । बस द्वारा पहुँचा गया । मि0 साइक्स, रिटायर्ड अंग्रेज अफसर हमारी प्रतीक्षा में था । वही कोर्स का निर्देशक था । संस्थान के निर्देशक थे जॉन सार्जेंट, कुछ देर के लिए वे भी आए । हैमिल्टन हाउस की चौथी मंजिल पर संजा-सँवरा यह संस्थान है दिन भर संस्थान में रहने के बाद शाम को ब्रिटिश काउंसिल जाना हुआ । फार्म भर कर यूथ सेंटर पर जमा कर उसका सदस्य बना । वहाँ एक फॅंकशन में यूगोस्लाविया की इसी प्रशिक्षण हेतु भेजी गई महिला अफसर से भेंट हुई ।

एक शाम को वेस्टमिनस्टरब्रिज देखने पहुँचे, जिसके नीचे से थैम्स नदी वह रही है और उसके किनारे पार्लियामेंट हाउस । लौटते हुए वाटरलू ब्रिज भी देखा दूसरे दिन फौरेस्ट हिल की तरफ गए । लंदन का एक सबर्व । अगले दिन ब्रिटिश म्यूजियम देखने गये, किन्तु बन्द होने का समय होने के कारण सरसरी निगाह से लाइब्रेरी हाल ही देख सके । शनिवार और इतवार को यहाँ छुट्टी रहती है । वहाँ स्कूली बच्चे-लड़कियाँ सप्ताहान्त में होटल सफाई करने आ जाती हैं ताकि कुछ जेब खर्च निकल आये । आत्म-निर्भर बनना सीखें इतवार की दोपहर को सेंट पाल कैथीड्रल जाना तय हुआ, यह एक भव्य स्मारक है । शाम को होटल लौटे और अपने भारतीय मित्र अभय से मिले इंडिया हाउस जाकर कुछ हिन्दुस्तानी लोगों से भी भेंट की और किंग्सक्रौस के पास ताजमहल रेस्तराँ में चावल सब्जी खाते हुए एक बांग्ला देशी, बाद में पाकिस्तानी के भेद भाव पर खींझ पैदा हुई ।

अगले दिन टैबिस्टौक इंस्टीट्यूट जहाँ दस प्रशिक्षणार्थी थे गये अपराहृन में वहाँ से कीट्स ग्रुप जाना हुआ । यहाँ कवि कीट्स का मकान है । एक दिन बुडलैंडफार्म हाउस में प्रोग्राम अफसर मिसेज मैडिंग्स के यहाँ "सपर", तभी गाँव का क्षेत्र देखने को मिला एक शाम को वैस्ट हैम्प स्टैड राइटर्स क्लब का निमंत्रण मिला, जो लन्दन की जानी मानी सोसायटी आफ आथर्स है तथा लेखकों के अधिकारों के लिए संघर्ष करती है, वहाँ लेखकों से प्रथम बार मिलने का अवसर था । क्लब की सचिव मिस क्लेटन से समय से पूर्व मिलने की कोशिश करने पर गोविन्द जी को कुछ शर्मिन्दा भी होना पड़ा क्योंकि अंग्रेज समय के पाबंद अधिक होते हैं । आखिर में पास के पार्क प्रिंस आफ वेल्स में चले गए । शाम को ठीक आठ बजे मिस क्लेटन के घर एक महत्वपूर्ण चर्चा हुई, किन्तु वह उबाऊ ही निकली । पश्चात् मिस्टर फ्रेंक की अध्यक्षता में एक लेख पढ़ा गया । आयरिश लोक धुने । लेख अच्छा था फिर एक सज्जन ने कविता पढ़ी - विंड विफोर दि रेन ।" कुल मिलाकर कार्यक्रम नीरस रहा ।

शनिवार को ब्रिटिश काउंसिल के छात्र केन्द्र द्वारा आयोजित "ब्राइटन" की यात्रा पर निकले । ब्राइटन एक हिल स्टेशन और समुद्री तट दोनों ही हैं । आस-पास देहाती

इलाका था । इतवार को दिन में पेटीकोट-लेन मार्केट का दृश्य, शाम को रगबी के लिए रवाना । यूस्टन स्टेशन पर प्लेटफार्म पर घुसते ही चैकिंग । यहाँ रेल-सेवा जनता की सेवा के लिए है, न कि लाभ कमाने हेतु ऐसा ब्रिटेन सरकार ऐलान से कहती है । पोस्टल मैनेजमेंट ट्रेनिंग कॉलेज और डेविड का पार्टीसिपेटिव ट्रेनिंग कोर्स । डेविड एक हीरो स्टाइल व्यक्ति था । टैविस्टोक प्रशिक्षण का दूसरा गुरूवार । शुक्रवार की शाम को उप्रैती के यहाँ क्रिकिल-वुड में गुजारना तय हुआ । शनिवार को आक्सफोर्ड के लिए रवाना हुए । प्रसिद्ध कालेज क्राइस्ट चर्च जो 1525 में स्थापित हुआ था । मैर्टन कालेज यहाँ का सबसे प्राचीन कालेज कहा जाता है - करीब 1264 का और मैग्डेलेन कालेज आक्सफोर्ड का सबसे खूबसूरत कालेज माना जाता है । यह भी 15वीं सदी में स्थापित हुआ था । इस प्रकार एक ही दिन आक्सफोर्ड को देखने का अवसर मिला ।

वसु के आगमन पर उनसे मिलने की उमंग में बकिंघम पेलैस गए जो कोई खास ईमारत तो नहीं है, परन्तु इंग्लैण्ड की रानी का महल होने के कारण मशहूर है, लगभग 3.30 बजे वसु विक्टोरिया टर्मिनस पहुँचा और हम रात 10 बजे होटल लौटे । सोमवार को प्रातः ही वसु हैनले चला गया और हमें नार्थ लंदन राइटर्स क्लक की बैठक में बुलाया गया, यहाँ रहते ही दीपावली का त्यौहार आ गया । जिसका पता इंडिया हाउस के अवकाश की वजह से ही लग सका । दिवाली उप्रैती साहब के यहाँ मनी । यहाँ भाई जान मिले । यही पर मिश्र जी ने लन्दन (इंग्लैण्ड) में भारतीयों की स्थिति पर प्रकाश डाला है ।

एक रात 8 बजे लन्दन राइटर्स सर्किल की बैठक कैक्सटन हॉल में हुई जहाँ "हर्स" पत्रिका की सम्पादिका जीन एंडरसेन "राइटिंग रीयल लाइफ स्टोरीज" पर भाषण देने वाली थी । किन्तु यह बैठक भी उबाऊ रही । शनिवार कैंटरबरी के लिए निश्चित, चौसर का शहर जो रोमन के जमाने से चला आता बेहतर शहर, यहाँ देखने योग्य हैं, कैथीड्रल, पुराना गेट, ओल्ड वीवर्स हाउस और स्टूव नदी तट । इतवार को शटलवर्थ के पुराने जहाजों

और मोटर आदि के संग्रह को देखने गए । 2 नवम्बर को टॉवर ऑफ लन्दन में "सेरेमनी ऑफ कीज" देखने जाना था किन्तु "वसु के आगमन के कारण मुझे भी उसके साथ इल्फर्ड जाना पड़ा । 6 नवम्बर को स्ट्रेटफर्ड अपौन एवन के लिए जाना हुआ, कस्बे में घुसते ही एवन नदी का दर्शन हुआ । यहीं प्रसिद्ध कवि व नाटककार शैक्सपीयर का जन्म स्थान । एक सुन्दर स्मारक । स्ट्रैटफर्ड से चार मील दूर उनकी माँ मेरी आर्डन का मकान । 23 अप्रैल को शैक्सपीयर के जन्म दिन पर अच्छा-खासा उत्सव मनाया जाता है, जुलूस निकाला जाता है । बैन जौनसन ने ठीक ही कहा था - "He (W. Shakespeare) was not for an age, but for all times."

फिर एक छोटी सी बस्ती हॉर्सले और होर्शम में ट्रॉजेक्शनल एनौलिसिल के प्रशिक्षण का कार्यक्रम जो दो-तीन दिन तक चला । होर्शम एक कालेज है, जिसकी छोटी-सी दुनियाँ है । "ट्रॉजेक्शनल एनौलिसिस" मनोविज्ञान का एक नया सिद्धान्त है, जिसके अनुसार आदमी का सब कुछ एडल्ट - (प्रौढ़), पैरेंट (माता-पिता) और चाइल्ड (बच्चा) में विभाजित है । आदमी की हर हरकत कोई न कोई गैम होती है - "कट्रैक्ट" और "फिक्स पार्क' की रेलयात्रा सबसे बड़ी रेलयात्रा है, धुंध भरा दिन, सिर्फ चार घंटे में यात्रा पूरी हुई । पुरानी डिजाइन का स्टेशन और खूब सूरती के लिए मशहूर शहर । यहीं शैला/उसके हस्बैंड और उसकी पुत्री लायला से मुलाकात हुई । शैला यार्क का एक गाना सुनाती है ।

'Wheer has ta bin, since a saw thee
On Ilkey Moor b'out at
'Ave bin a' courting Marian
X X X
Then we shall all have eaten thee
On Ilkey Moor b'out at -----

शैला एक पेन पोट्रेट भी खींचती है । यहाँ की ऊस नदी खूब साफ सुथरी इंग्लैण्ड की सभी नदियों में साफ । पक्के बने घाट । यहीं बौटनिक गार्डन और रोमन जमाने की मल्टागुंलर टावर है, पास ही एंग्लियन टावर के अवशेष हैं जो 71 की खुदाई में मिले थे । धुंध भरे मौसम में रोमन दीवार की सफेदी कुछ ज्यादा ही चमकती थी । हैजलिंगटन में यार्क यूनिवर्सिटी का खूबसूरत कैम्पस है । वैंटवर्थ कॉलेज में श्री क्लार्क और ग्रीन के साथ लंच । तत्पश्चात गुप्ता का कमरा देखा और शाम को यार्क विश्वविद्यालय के अध्यापक वर्मा जी गाड़ी लेकर आये और यहीं रूकना हुआ । सबेरे नौ बजे एडिनवरा देखने को जाना हुआ ।

न्यूकासिल एक औद्योगिक कस्बा है जो टाइन नदी के किनारे बसा हुआ है । यहीं स्कौटलैंड के पसरे मैदान शुरू हो गये । बैंक वाटर्स रेल की लाइन के पास एक छोटी सी बस्ती और एलमाउथ का स्टेशन । समुद्र सामने फैला हुआ सा । डनवर समुद्री तट पर बसा हुआ कस्बा ।

एक दिन विश्वविद्यालय से कासिल देखने गए, जो चट्टान पर कोई इमारत है जिसका 6वीं सदी की एक वैल्श कविता में भी उल्लेख हुआ है । 1573 में कासिंल पर अंग्रेजों का अधिकार हो जाने से इसकी कहानी ही समाप्त होने वाली थी । यहाँ मेरी स्वीन ऑफ स्कौट्स ने जैम्स छठे को जन्म दिया था । इसके मुख्य दरवाजे पर कुछ यादगारें लिखी थीं । फिर हालीरूड हाउस देखने पहुँचा जो 1128 में हालीरूड को समर्पित एक एब्बी थी, जिसके खंडहर आज भी देखने को मिलते हैं । 1671 के करीब चार्ल्स द्वितीय ने महल बनवाना शुरू किया था और जेम्स चार ने एब्बी गैस्ट हाउस बनवाया था ।

इसके बाद ग्लासगो के लिए रेल से यात्रा की जो एडिनवरा से कुल 45 मिनट के सफर की बराबर दूर है । गाड़ी में ही एक व्यक्ति ने मुझे लेक डिस्ट्रिक्ट के बारे में बताया, वह सेल्समेन था । ग्लासगो आधुनिक डिजायन वाला स्टेशन है, यह एक बड़ा शहर है जहाँ बड़े-बड़े बाजार भी हैं । यहीं जार्ज स्कावयर भी देखा । हेवर्ड का पुराना रेलवे स्टेशन, ग्लासगो क्रौस, छठी सदी में यहाँ धर्म प्रोटेस्टैंट था । सामने प्रावैंड्स लॉर्डशिप है जो स्काटलैंड का सबसे पुराना 1471 का मकान था । 1566 में रानी मैरी (मेरी क्वीन) भी यहाँ आकर ठहरी थी । उस मकान के सामने ही रॉयल इनफार्मरी है, जहाँ आज भी अस्पताल है । जार्ज स्कावयर के पास एक बैंच पर बैठकर आराम करने लगा जहाँ एक लंगड़ा भिखारी भी बैठा था । उससे दोस्ती हुई और शाम को होटल लौटने पर होटल की मालकिन को निमंत्रण देने पर ज्ञात हुआ कि यहाँ अपना घर होना मानो कोई बड़ी बात है - "I have a house, You Know"

दूसरे दिन कैल्विनगूव पार्क में आर्ट गैलरी और म्यूजियम देखा । ऊपर पहाड़ी से झाँकती ग्लासगो विश्वविद्यालय की इमारत और आड़ी तिरछी बहती हुई कैल्विन नदी - खूबसूरत नजारा । शाम को एप्सले होटल में एक करीब 20 वर्षीया सुन्दर लड़की से परिचय हुआ जो यूनिवर्सिटी में फाइन आर्टस में पढ़ती थी । वादानुसार रात को वह अपने साथ तीन लड़कों को लेकर मुझे यूनीवर्सिटी बार ले जाने के लिए आई जिससे वहाँ का वातावरण भी देख सकूँ । एकदम टसाठस, धुँआ और शोर भरा वातावरण । इसके बाद एक हिल-स्टेशन देखने गया जहाँ का मुख्य आकर्षण था, लेक डिस्ट्रिक्ट ।

किलमारनौक का सुन्दर प्राकृतिक दृश्य मनमोहक था । फिर औक्सनहम और बिंडरमेयर बस्तियों को देखा । इतवार को टॉवर ऑफ लन्दन देखने निकले । लेकिन टॉवर बन्द थी । अगला हफ्ता व्यावहारिक ट्रेनिंग का कार्यक्रम बनाते-बनाते बीता और टैविस्टौक संस्थान के कोर्स का समापन अपने ही संस्थान में हुआ । तत्पश्चात् शुक्रवार को कैम्ब्रिज जाना हुआ जहाँ डा0 मैकग्रेगर और शर्मा जी से मुलाकात हुई । कैम नदी का तट और क्वीन्स कॉलेज का वातावरण अच्छा लगा । किंग्स कॉलेज तथा अन्य कॉलेज भी देखे और लौटकर लन्दन आ गए । शनिवार को पुनः टावर आफ लन्दन देखने गया जो विलियम द कौंकरर द्वारा बनबाई गई है यहाँ कई टॉवर हैं - बाइवर्ड टावर, बैल टावर, ब्लडी टावर । व्हाइट टावर के पास गाइड ने रेवंस का किस्सा सुनाया । ज्वैलहाउस जाकर सोने की तलवारें, बर्तन, मुकुट, क्रौस आदि देखे जार्ज पंचम का वह मुकुट भी जो 1911 में दिल्ली दरबार में पहना गया था और रानी एलिजाबेथ की माता का कोहिनूर जड़ा मुकुट भी देखा । क्वींस हाउस टावर ऑफ लन्दन का प्रसिद्ध भाग है यह हाउस 1530 में बना था बाद में विभिन्न योजनाओं के तहत समय-समय पर प्रयोग किया जाता रहा । आजकल इसमें टावर का चीफ रहता है । फिर ब्रिशेम्प टावर को देखा । कुल मिलाकर टावर ऑफ लन्दन खून, कत्ल, षडयंत्र, प्रतिशोध आदि भावनाओं से रंगी हुई है ।

3 दिसम्बर, 76 का प्रातःकाल, सैंट्रल सिटी होटक के कमरा नं0 1518 में आखिरी दिन । एक छात्र की भाँति बैठकर कोर्स का सर्टीफिकेट प्राप्त किया और लंच के बाद

विदाई । धुँध भरा दिन था, अकेले ही हैम्पटन कोर्ट जाना हुआ । इसे हैनरी आठ के जमाने में टौमस वोल्से ने बनवाया था । शाही महल जैसी इस इमारत में करीब 500 कमरे थे । हेनरी आठ ने इसे बढ़ाया जो राज्य का सबसे समृद्ध और विलासपूर्ण महल हो गया । यही एडवर्ड छ: पैदा हुआ, बाद में मैरी और एलिजाबेथ दोनों ने इसका शाही कामों के लिए इस्तेमाल किया । चार्ल्स प्रथम (I) यहाँ राजा और कैदी दोनों ही रूपों में रहा । रानी विक्टोरिया के समय में यह महल आम जनता के लिए खुल गया । महल का सम्पूर्ण विवरण। महल देखने के बाद क्वीन्स - वरो होटल में पहली रात बिताई । शनिवार-इतवार को भी रहा । तत्पश्चात् इस होटल से छुट्टी पाने के विचार से सोमवार की रात देशवन के साथ ब्रिस्टल आयकर ट्रेनिंग के लिए रवाना हो गए । वहाँ पर भी मकान जैसा वाशिंगटन होटल । फिर बाथ कस्बे की यात्रा, रोमन स्नानागार का दृश्य, गर्म पानी का सोता पल्टनी ब्रिज और रौयल क्रिसैंट की अर्धवृत्ताकार भव्य इमारत, सब देखकर शाम को सुपर फास्ट एक्सप्रेस गाड़ी से वापसी ।

अगले दिन ब्रिस्टल देखने गये । वहाँ सस्पेंशन ब्रिज, ऐवन नदी, दोनों तरफ पहाड़ियां, पार्क स्ट्रीट, कैवर टॉवर तथा अन्य दृश्य देखकर शाम को वाशिंगटन होटल आए । ब्रिस्टल से वेल्स की राजधानी कार्डिफ पहुँचे । स्टेशन से सीधा एक पार्टी में ले जाया गया, जहाँ अधिकतर अधिकारी थे । पार्टी से रिश्मेंड होटल में ठहरना हुआ जहाँ श्री सरकार नामक भारतीय अफसर से भेंट हुई ।

सेंट फैगस एक छोटा सा गाँव । म्यूजियम के लिए प्रसिद्ध । म्यूजियम के रेस्तराँ में खाना हुआ तथा श्री सरकार के साथ एक भारतीय यादव के घर जाना हुआ और इतवार को उन्हीं के साथ बेरी टाउनशिप के टूर पर गया जो एक छोटा सा साफ सुथरा कस्बा है । सोमवार को प्रसिद्ध कवि औरमंड से मुलाकात हुई और उसके साथ रॉयल होटल में ठहरना हुआ। कविता पर बातचीत हुई । उन्होंने अपनी कविता का एक संग्रह - Definition of a Waterfall भेंट की । इसके बाद कहानीकार और आलोचक जौन स्टुअर्ट विलियम्स तथा

लेखक विलन जोन्स से मुलाकात हुई । दूसरे दिन सुबह आर्ट्स काउंसिल में साहित्य-निदेशक स्टीफेंस से भेंट हुई जो अधिकारी और कवि भी थे । उन्होंने Moniorty Languages in Western Europe नामक बड़ा सा ग्रन्थ और Artist in Veles (आर्टिस्ट इन वेल्स) का सम्पादन किया है । इसी बीच अनेकों मुलाकातें हुई ।

तदनन्तर रेल द्वारा वेल्स को रवाना हुआ, वेंगर स्टेशन पहुँचकर जोन्स का अतिथि बना और काइरनौर्व में प्रिंस ऑफ वेल्स होटल में रूका । यहाँ काउंटी कमेटी की बैठक में हिस्सा लिया जहाँ चेयरमैन ने अन्य सदस्यों से मेरा परिचय कराया । एंग्लसे द्वीप तथा नदी संगम और समुद्री दृश्य बड़ा ही मोहक लगा । यहाँ दो तीन अन्य जोन्सो से मुलाकात हुई कोई नाटककार तो कोई साहित्य का अध्यक्ष । इस प्रकार वेल्स देश में कुछ दिन बिताये । फिर लौटकर ब्रिटिश काउंसिल पहुँचा जहाँ विल्की से अपना हिसाब किताब किया । और इस तरह इंग्लैण्ड की यात्रा करीब-करीब समाप्त हुई ।

तभी मित्र वसु का पत्र मिला कि यह योरोप की यात्रा पर जा रहा है, पेरिस में ठहरने का प्रबन्ध हो जायेगा और बेल्जियम तथा होलेंड में होटल में रूक जायेंगे और 23 दिसम्बर को हम सभी मिले । ट्रेफाल्गर से टैक्सी द्वारा विक्टोरिया स्टेशन पहुँचे जहाँ फ्राँस और यूरोप के देशों में जाने के लिए लम्बी लम्बी लाइन लगी हुई थी । रात दो बजे डोवर पहुँचे वहाँ से जहाज द्वारा जाना था, फिर रेल से । रेलगाड़ी "पारिस द नार्द" की तरफ भाग रही थी और आगे चलकर सिटेयूनिवसिते आर पहुँचे । वहाँ श्री गुलाटी नामक डाक्टर से भेंट हुई जो अमेरिका में तैनात है और अब फ्रान्स आये हैं । एक मणिपुरी भारतीय भी मिला । जिससे काफी मदद मिली । होटल 'द्यु पार्क' में रूकने का इंतजाम हुआ । यहाँ मैट्रो द्वारा घूमना हुआ, 'मोपानसि' मैट्रो का एक बड़ा स्टेशन है । यहाँ कमर्शियल सेंटर की ऊँची-ऊँची इमारतें देखने योग्य हैं । यहाँ भी भीड़-भाड़ वाली रौनक भरी दुनियाँ देखी । दूसरे दिन आइफिल टावर को देखा, यहाँ तक मैट्रो से आये स्टेशन का नाम-वीर हकीम आइफिल टावर कुतुबमीनार जैसी लोहे की विशाल मीनार है । यहीं पर 'पैले दे शैलो' नामक इमारत भी देखी तथा प्रसिद्ध अजायबघर भी देखा । 'पो द न्युफ' पेरिस का सबसे पुराना पुल है - हेनरी चार

चार के समय का । "पाले द जस्तिस" और 'नौत्र दम' को देखते हुए काफी समय बिताया, फिर 'सार बोन यूनिवर्सिटी' होते हुए 'लुक्सैम बुर्म' आ गए और वहाँ से मैट्रो द्वारा वापस सिते यूनिवर्सिटी आए ।

फिर पेरिस गए, जो दुनियां का सबसे मँहगा शहर माना जाता है । सबसे पहले "पॉरिस द नार्द" स्टेशन गए जहाँ वेल्जियम के लिए रेलगाड़ियों का पता लगाया, फिर स्कवायर कैथीड्रल देखा, उसी के बगल में चित्रकारों की बस्ती है - 'मोमार्त'। फिर सेक्स के लिए मशहूर बस्ती "पिगाल" को देखने गए । यहाँ का कैबरे शो प्रसिद्ध है । अगले दिन मैट्रो से 'आवालीद-नेपोलियन' का मकबरा देखा, 'सेन' नदी और 'पो रॉयल' का आनन्द लिया, नाव में बैठे । दूसरे दिन 'लुब्ध' देखने गये जो सर्वाधिक भीड़ भाड़ वाला दुनियाँ के सबसे बड़ा अजायबघरों में से एक हैं । उसे देखते देखते श्री और श्रीमती वसु काफी थक गए और वापस लौट आए ।

अगले दिन 9.30 बजे बेल्जियम के लिए रेलगाड़ी द्वारा प्रस्थान किया । पैरिस से ब्रूसेल्स का रास्ता बर्फ से ढका था । ब्रूसेल्स उतरकर एम्स्टरडैम तक का टिकट बनवाया, वहाँ करीब 4.30 बजे पहुँचे । यहाँ भी अनेक दर्शनीय स्थल देखे और इस प्रकार यूरोप की यात्रा का आखिरी दिन आ गया । हम सभी ट्राम द्वारा कैनेडी लॉन स्टेशन पहुँचे । यहाँ भी इशारों से काम चलाना पड़ा अब इंग्लैण्ड में मन नहीं लगा । भारत भूमि अपनी ओर खींचने लगी । वापसी के लिए एयर इण्डिया का टिकट लिया, सारा सामान समेट ब्रिटिश एयरवेज की बस द्वारा हीथ्रो हवाई अडडा पहुँचा और जहाज आधी रात को मास्को होता हुआ फिर हिमालय पर्वत श्रृंखला से उड़ता हुआ दिल्ली (भारत) के हवाई अड्डे पर उतरा, हिमालय भारत का प्रवेश द्वार और एक शान्त योगी है । यहीं धुन्धभरी सुर्खी खत्म होती है ।

"दरख्तों के पार ..... एक शाम"

यह मिश्रजी की यात्रा-वृत्त पर द्वितीय रचना है जिसका प्रकाशन 1988 में हुआ था। मिश्रजी की यह यात्रा "इण्डियन काउंसिल ऑफ कल्चरल रिलेशंस" के नेतृत्व में हुई थी जो जर्मनी, चैकोस्लोवाकिया, और हंगरी तीन देशों की यात्रा थी तथा जिसका समय तीन सप्ताह का था। इस यात्रा-वृत्त को मिश्रजी ने विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत प्रस्तुत किया है न कि "धुंध भरी सुर्खी" की भाँति सपाट रूप में। ये शीर्षक हैं - उड़ान, जानदार कौम, बदले हुए वक्त की गल्ती, देहात और शहर गैंगस्टर्स का शहर, अदालती कार्यवाही, अतीत का अपनत्व कंप्यूटर आदमी, जर्मनी रोमान्टिसिज्म का प्रतीक - हाइडिल वर्ग, खूबसूरत राईन, खिचरखिच पुराना नया अगल-बगल-बौन और कोलोन, अन्तर्राष्ट्रीय साजिश का शिकार - बर्लिन, म्यूनिख - एक नौजवान शहर, मूर्तियाँ इमारतें और इतिहास - वियना, कराहती खूबसूरती - ब्राहयू, चोटियाँ, डन्यूब के साथ-साथ, बलाटोन झील, तलाश किसकी और वापसी।

उड़ान -

दिल्ली से फ्रैंकफर्ट एयर पोर्ट तक की उड़ान, एक रात को बम्बई के सैन्च्योर होटल में ठहरने, काइरो में एयर इण्डिया के कर्मचारियों की तब्दीली के साथ एल्पस पर्वत की सुन्दर पर्वत माला का वर्णन किया है।

जानदार कौम -

शीर्षक अन्तर्गत फ्रैंक-फर्ट हवाई अड्डे की विशाल इमारत, स्टुटगर्ट के लिए विमान लेने के मध्य पाँच घंटे के समय में बार-बार एवं दूसरी ऐस्कार्ट के साथ नाश्ता तथा टी०वी० पर फुटबाल मैच देखने का उल्लेख किया गया है, फिर वहाँ से 'लुफ्तोजा' विमान द्वारा 'स्टुटगर्ट' की उड़ान का जिक्र है।

बदलते हुए वक्त की गलती -

मिस रिनेट से भेंट और रेवकर होटल में ठहरने का प्रबन्ध बताया गया है । प्रातः 5 बजे उठकर इधर-उधर फोन करने पर मिसेज रिनेट ने इस गलती का अहसास कराया, तत्पश्चात ट्युविनजिन बस्ती में इंडौलौजी विभाग में एक भारतीय महिला और डा0 पीटर से मुलाकात हुई मिस0 हैम्पल प्रोग्राम अफसर थी । डा0 पीटर संस्कृत साहित्य के प्रेमी थे । नेवकार नदी का हरा-भरा पानी और उसके किनारे प्रसिद्ध कवि हर्ल्डलीन का मकान था । इनडेर बर्न में अन्तर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक विनिमय के प्रकाशक एयटमन से मिलकर शाम को स्टुटगर्ट लौटना और रात को डा0 क्लाइन में भेंट हुई । फिर सुबह मिस रिनेट की डॉट पड़ी किन्तु लेखक का भी पारा चढ़ गया । मिस0 हैम्पल हँसमुख महिला थी, उन्होंने रिनेट को समझाया । पुनः स्टौफर नुमायश संग्रहालय कासिल देखने गए, जहाँ काफी भीड़ थी । मार्डन आर्ट गैलरी में 18वीं/19वीं सदी के चित्रों का संग्रह था । शाम को एयर इंडिया के कार्यालय जाकर वियना के बारे में पूछताछ की और टी0वी0 टावर के पास घूमते रेस्तराँ में खाना खाया । अन्त में रिनेट के साथ भावुकतापूर्ण वातावरण में मधुर वार्ता, क्षमा प्रार्थना हुई और एक दूसरे से विदा ली ।

देहात और शहर -

अगले दिन सुबह अर्जेन्टीना वासी महिला श्रीमती क्रिस्टीना फर्नाडीस गमियो (दुभाषिया) के साथ लुडविख्य वर्ग से टैक्सी द्वारा मारवारत की यात्रा की, एक छोटा सा कस्बा जहाँ शिलर संग्रहालय एक बड़ी सी इमारत में था । जुडविख्यबुर्ग में कासिल में एक पुराने महल को देखा स्टुटगर्ट लौटकर बागवानी के मेले में जर्मनियों के मौज-मस्ती का जायजा लिया । दूसरे दिन सबेरे ब्लैक फौरेस्ट जाते समय डा0 कैपलर का जन्म स्थान बाइल डनस्टट मिला, फिर छोटा सा कस्वा कल्फ पड़ा । आगे पेड़ों से ढकी नागोल्ड नदी और ब्राउट मछली के लिए प्रसिद्ध इलाका । टौनबाख हिल स्टेशन, जहा बड़ होटल और टेनिस कोर्ट की सुविधा है को देखते हुए ब्लैक फौरेस्ट पहुँचे । ट्राउल ग्रेप होटल में खाना हुआ जहां कुत्ते के साथ एक महिला आई तो

मालूम हुआ कि यहाँ कुत्ते का अच्छा स्म्मान है । वहाँ का दृश्य देख कर लौटते समय फ्रओम डनस्टट के चौराहे पर कुछ दुकानें देखीं । फिर क्रिस्टीना से विदाई ली और स्टुटगर्ट में चार दिन बिताये । स्टुटगर्ट द0 प0 जर्मनी की राजधानी और राजनीतिक गतिविधियों का केन्द्र है । यह छोटा होते हुए भी बड़े शहर का आभास कराता है ।

गैंगस्टर्स का शहर अदालती कार्यवाही -

गोआ निवासिनी मिसेज ऐंगिल्स से मुलाकात हुई, बाद में होटल हैस्सिशर होफ के कमरा नं0 5.2 में ठहरने का इंतजाम हुआ । गैंगस्टर्स ऊँची-ऊंची आधुनिक इमारतों वाला अन्तर्राष्ट्रीय शहर है । दूसरे दिन मिस0 ऐंगिल्स की किसी अदालती कार्यवाही में पेशी थी । पेशीग्रोस-गैराउ की जिला अदालत में थी । मार्ग में माइन नदी पर आठ पुल पड़े । यहाँ का कोर्ट साफ सुथरा था, और जज स्वयं माइक से बुलाकर अलग-अलग बयान लेता था । ऐंगिल्स की दोस्त लड़की से बात करने पर मालुम हुआ कि शादी के लिए किसी सर्टीफिकेट की जरूरत नहीं पड़ती, जब तक जिस दोस्त लड़के से व्यवहार अच्छा रहा उसके साथ, अनबन होने पर किसी दूसरे के साथ या फिर अकेले ही शहर का छोटा सा चक्कर । यह शहर फ्रैंकफर्ट ही है जो बैंकर्स और गैंगस्टर्स का शहर कहलाता है यहाँ दुनिया के करीब 300 बैंक हैं ।

अतीत का अपनत्व -

डा0 लोठार लुत्से द्वारा स्वागत और हाइडिल वर्ग से कुछ ही दूरी पर राइनबाख के बाइविल्स गैस्ट हाउस में भोजन हुआ हाइडिल वर्ग एक अच्छा सा शहर लगा । दक्षिण एशिया संस्थान में डा0 लुप्से के अलावा मिश्र जी की वहाँ के छात्रों से बातचीत हुई । आठ बजे कार्यक्रम समाप्त कर डा0 लुत्से के घर विश्राम हुआ । प्रातः लगभग 5 बजे ही अकेले जाकर शहर को और नेक्कार नदी के दृश्य को देखा ।

कम्प्यूटर आदमी -

सघन वृक्षों के मध्य हाइडिलवर्ग का सिल के खंडहर देखे जो 1689 में लुडबिख की फौजों ने जला डाला था । एस्कोर्ट बहुधन्धी आदमी था और एक प्रकाशक से बात करके मेरे लौटने पर उसे खीझ उत्पन्न हुई । सविसन हाउ जिन भी जाना हुआ, जहाँ पब्स अधिक है। इसके बाद एक चैस क्लब गये जहाँ विशेष संगीत चलता था । रात को सैक्स जगत के अड्डे काइजर्स स्त्रा'से' पहुँचे । वहाँ का रंगीन सैक्स भरा माहौल देखते हुए 'लाइव शो' गली गये जहाँ दर्शक बृद्ध जन थे । फिर हाइडिल वर्ग को वापस ।

जर्मन रोमान्टिसिज्म का प्रतीक हाइडिल वर्ग -

डा0 लुत्से, डा0 बैकर और मिश्र जी ने ओडिनवल्ड, ब्लैक फौरेस्ट को देखा, जंगल में पहुँचकर ऐसा लगा मानो प्रकृति की गोद में आ बैठे हैं । एक पहाड़ी पर स्थित कासिल के पास खेत में स्नेहिल युग्म तथा दो बच्चों के साथ एक महिला मिली । पुनः वापस डा0 बैकर के काटेज में खाना और वाइन । फिर एक जर्मन गाना और आत्मीयता भरा हाइडिल वर्ग छोटा सा प्यारा कस्वा ।

खूबसूरत राइन -

हाइडिल वर्ग से महाइम में राइन नदी के दर्शन किए । राइन और माइन नदियों के संगम पर होर्टमुंह बस्ती । पहाड़ियों के बीच लगे घाटी से बहती टेढ़ी-मेढ़ी राइन नदी का दृश्य बड़ा ही सुन्दर लग रहा था । नदी की बराबरी पर रेलमार्ग चलता है । माइंस से कोब्लैंस तक का रास्ता खूबसूरत है । इस दृश्य की तुलना लेखक ने भारत की व्यास नदी और बद्रीनाथ के मार्ग से करनी चाही है । नारी सौन्दर्य से राइन नदी के जल प्रवाह की उपमा देते हुए मिश्रजी बताते हैं कि कोब्लैंस घाटी में ही मोजल और राइन मिलती हैं तथा आगे बढ़कर धीरे-धीरे राइन कहीं लुप्त सी हो जाती है ।

खिचिरखिच -

पुनः बौन में नरमीए स्कोर्ट मिली । बौन के बाद कोलोन और फिर डुसुलडोर्फ । एस्सन से औद्योगिक बस्तियों का आरम्भ होता है क्योंकि यह क्षेत्र कोयला और स्टील के लिए प्रसिद्ध है । डोर्टमुँह में एक औथर्स कांग्रेस की लेखक, कवि, टी0 वी0 और रेडियो के लिए लिखने बाले कलाकारों से परिचय हुआ किन्तु बैठक नीरसता भरी थी । तत्पश्चात् रैकलिंग हाउजन में रात्रि-विश्राम कर सुबह एक पार्क में बिठाया ।

पुराना नया अगल-बगल - बौन और कोलोन -

बौन एक प्रसिद्ध और बड़ा शहर है, यहीं बख्श निवास में प्रशा का विश्व विद्यालय बना था, यहाँ अनेक हॉल एक जैसे ही बने हैं । 1737 में बनी टाउन हाल की इमारत भी देखी । बाजार का भीड़-भाड़ वाला दृश्य भी दिखाई दिया । बौन में सिनेमा घर (थियेटर) भी बहुत हैं । राइन नदी के किनारे ग्रान्थ थियेटर बिर्गे का क्षेत्र है । एक छात्रा के साथ छोटी नाव (फैरी) से राइन नदी को पार कर इस ओर आ गए । शाम को फोन पर यागसेनी पौपट से बातचीत हुई और पैसंजर रेलगाड़ी द्वारा लिंस अं राइन पहुँचकर पोपटजी के यहाँ । खासा बड़ा मकान, रात वहीं बितायी । लौटकर बौन और वहाँ से कौलोन जाना, किन्तु चैकोस्लोवाकिया के दूतावास में वीसा काउंटर पर महिला कर्मचारी से टकराव हो गया कि जर्मन रेडियो स्टेशन में डा0 ग्रौस से मिलकर वीसा के लिए प्रयत्न किया येन-केन-प्रकरेण अपरान्ह कोलोन शहर पहुँचा गया । कोलोन आधुनिकता लिए पुराना ऐतिहासिक नगर है । यहाँ पुराने गिरिजाघर हैं और भी महत्वपूर्ण धार्मिक इमारते हैं । शाम को 5.30 बजे एक नौजवान एस्कोर्ट की जिम्मेदारी में आ गया यहीं स्टेशन पर एक महिला पत्रकार से भेंटवार्ता हुई और वह खाने के बाद सही रेलगाड़ी में बैठाकर चली गई ।

अन्तर्राष्ट्रीय साजिश का शिकार - बर्लिन -

बर्लिन द्वितीय विश्व युद्ध के बाद दीवाल लगाकर बाँट दिया गया नगर है - पूर्वी बर्लिन और पश्चिमी बर्लिन । युद्ध से पूर्व यह एकीकृत बर्लिन संस्कृति और जीवन शैली के

मामले में अग्रणी था । मिश्र जी अपने साथी नोई हाउस के साथ पैदल ही बर्लिन की सड़कों पर घूमते रहे । पश्चिम बर्लिन चारों तरफ से पूर्वी जर्मनी से घिरा हुआ है ।

25 मई का प्रातःकाल विदेशी दूतावासों का पुराना क्षेत्र मिला पोट्सडमर फ्लटस स्कवायर जाते समय । यहीं बर्लिन का विभाजन करने वाली दीवाल देखी जो खास ऊँची नहीं है । एक मकान पर चढ़कर दूसरी तरफ हिटलर का बंकर उत्थान - पतन की कहानी समेटे । स्प्रेनदी तट पर समाधियाँ दिखाई दीं तथा राइखस्टग की दूसरी तरफ ब्रंडनगुर्ग की झलक देखी । 17 जून और विस्मार्क नामक सड़कों का इलाका भी देखा । 1920 के आस पास का बर्लिन का औलम्पिक कैम्पस देखते हुए बर्लिन के जंगल में पहुँचें कहते हैं बर्लिन का 2/3 भाग जंगल और झील है । यहीं एक रेस्टोरां में जर्मन लेखक संघ के अध्यक्ष डा0 हन्नेस श्वैगट से बातचीत हुई । दोपहर को लेखकों के आपसी सहयोग से चलायी जा रही किताबों की दुकान देखी और शाम को नवीन साहित्यिक सोसायटी के अध्यक्ष डा0 एंगिल्स से मुलाकात हुई, साथ में श्रीलंका की भक्त जूलिनया और भारत की भक्त अन्य महिला भी थीं ।

27 मई की सुबह एकेडैमिक एक्सचेंज में बार्ल और फिर बर्लिन का खूबसूरत क्षेत्र हंजर्फिर्टल जहाँ भव्य इमारतें हैं, देखा । लंच के बाद लिट्रेरी कौलोकियम बर्लिन की तरफ गए जो जर्मन साहित्यकारों, फिल्मकारों के काम करने, सेमिनार आदि करने का सुन्दर स्थान है वहाँ से क्लीनिकर ब्रिज पहुँचे जो पूर्वी और पश्चिमी बर्लिन को जोड़ने वाला एक एकता का पुल है । यह अमेरिकन सेक्टर है जहाँ फ्रांस अमेरिका और ब्रिटेन के 12,000 सैनिक अब भी रहते हैं । पुल के पार पूर्वी जर्मनी की तारों वाली दीवार दिखती है । स्वतंत्र विश्वविद्यालय होते हुए लौटकर शाम को एक अनौपचारिक बैठक में चित्रकारों और कवियोंसे भेंट हुई । फिर एक दिन पूर्वी बर्लिन के कन्ट्रक्टेड की यात्रा । पूर्वी बर्लिन में घुसते ही कुछ बासी-बासी इमारतें मिलीं, जबकि ज्यादातार इमारतें पूर्वी भाग में ही हैं । हम्बोल्ट यूनीवर्सिटीर, कैथींगल, जर्मनवार मैमोरियल, रायल (स्टेट) औपेरा एवं कार्लमार्क्स स्ट्रीट देखते हुए प्रेडीडेंटक दफ्तर और नये पार्लियामेन्ट हाउस, टी0 वी0 टावर की नयी इमारतें दिखायीं दीं । चेहरे ज्यादातार गम्भीरता लिए हुए थे । फिर वापिसी में नारे हाउस मिला जो एयर पोर्ट तक मुझे छोड़ गया था ।

म्यूनिख = एक नौजवान शहर -

म्यूनिख एयर पोर्ट पर श्रीमती बल्नर के साथ एम्बैसडर होटल में सामान रखकर यूनिवर्सिटी का इलाका देखा । शॉपिग पबो की, गुप्तगूँ के बाद दूसरे दिन औपेरा स्क्वेयर जहाँ औपेरा हाउस रॉयल रेजीडेंसी है, गए । यहाँ से 'मक्सी मीलियन स्त्रासे' पर पैदल चलते हुए 'इजार' नदी पर जा पहुँचे । जहाँ 'मक्सीमीनियान उन' खूबसूरत इमारत है । थोड़ी देर 'काउफिंगर स्त्रासे' पर चहलकदमी की फिर टैक्सी द्वारा 'नुम्फिनबुर्ग' कासिल देखा । यह कला प्रेमी लुडविख । राजा की सुन्दरियों वाली गैलरी थी । वियर गार्डेन में नाश्ता करके आधुनिक वास्तु शिल्प के लिए प्रसिद्ध ओलम्पियापार्क पहुँचे और शाम को नेशनल थियेटर जो 2400 लोगों की क्षमता वाला बड़ा ही रईसाना हाल है, में "कोरमेन" औपेरा देखा ।

इतवार के दिन एल्पस की जड़ पर बसे छोटे से कस्बे गार्मिश को देखने गया जहाँ से आस्ट्रिया को रेल जाती है । यहाँ का दृश्य देखकर वापस होटल के कमरा नं0 210 में, सुबह होटल का मैनेजर स्टेशन छोड़ गया । रेलगाड़ी से म्यूनिख जाते समय पार्तनख नदी से मिलने वाली लोईजख नदी, स्टर्नबेर्गर बड़ी सी झील और जुड़विख ।। झील को देखता हुआ खुश हो रहा था । म्यूनिख का ओलम्पिक हाल और 80,000 दर्शकों की क्षमता वाला विशाल स्टेडियम भी देख डाला, अन्तिम दिन म्यूनिख एयरपोर्ट से विदाई ली ।

मूर्तियाँ, इमारतें और इतिहास - वियाना -

म्यूनिख के बाद । जून को *वियाना* में एक दिन के लिए । वियना प्राचीन शाही शहर है जो 12वीं सदी से 1918 तक लगभग सदा ही राजधानी रहा हो । दो बजे से टूर का कार्यक्रम रखा जो बड़ा ही व्यवस्थित था, बसों द्वारा पास ही इन्टरनेशनल एटोमिक एनर्जी का बड़ा दफ्तर जहाँ आमने-सामने गेटे और शिलर की मूर्तियाँ हैं, फिर राजसी निवास हौफबुर्ग, आगे चौराहे पर मेरिया थैरेसिया (1777-1780) की सिंहासनस्थ विशाल मूर्ति मिली । वहाँ से गर्मियों के महल शैम्बून की तरफ गए, जो एक लम्बा इतिहास छिपाए हुए है, महल का बाहरी परिवेश एक बड़े पार्क और फ्रांस के बर्साइल पैलेस की याद दिलाता है । आगे स्टालिन के रहने का पीला सा मकान, फिर 1711-1724 में बना सैबोय के राजकुमार, यूजेन का बेल्वेडियर पैलेस । सिर्फ इमारतों और मूर्तियों का ही शहर था मानो वियना । एक ही दिन में यह

प्राचीन ऐतिहासिक सन्धियों का शहर देख लिया गया और चैकोस्लोवाकिया एयर लाइन के जहाज से प्राहा को प्रस्थान किया ।

कराहती खूबसूरती प्राहा -

प्राहा पहुँचकर कई जगह जाँच पड़ताल हुई और ईरजी दुभाषिया के साथ होटल इंटरनेशनल एक कप चाय लेकर शाम को इधर-उधर का क्षेत्र देखा और अगले दिन सुबह ही डा० वात्सेक आ गए तथा उन्होंने संस्कृति कार्यालय में मेरा कार्यक्रम रखने का प्रयास किया । वहाँ से हरतछानी (प्राहाकासिल) गये जहाँ प्रेसीडेंट का दफ्तर है । प्राहा के केन्द्रीय भाग में बड़ी-बड़ी, पीली-पीली इमारतें और तंग सड़कें हैं । वल्तावा नदी के दोनों तरफ बसा हुआ शहर है यह । डा० स्माइकिल और श्री एवं श्रीमती दामगार अंसारी से बात हुई । यहाँ कुत्ता पालने का शोक है किन्तु नियमित डाक्टरी जाँच और टेक्स के कारण अब कुछ कठिनाई हो गई है । दो बजे ओरियंटल इंस्टीट्यूट में डा० क्रासा एवं उनके दो साथियों से डा० अंसारी के साथ मुलाकात की, वहाँ से चार्ल्स ब्रिज (कार्लूफ मौस्त) अति प्राचीन और सुन्दर पुल को देखा, यहाँ बहुत सी इमारतें देखी तथा मिकुलाश (कैथींगल) और कासिल भी । पुल पार करके पुराना शहर पड़ता है । विश्वविद्यालय पुस्तकालय बड़ी सी इमारत में है । सिटी लाइब्रेरी के आस-पास म्यूनिसपालिटी का दफ्तर भी एक बड़ी सी इमारत में है । यही टींस्की चर्च और प्राहा की सुप्रसिद्ध पुरानी घड़ी है । ओल टाउन स्क्वायर पर घूम फिर कर देखा । यहाँ "अक्टूबर क्रान्ति की सत्रहवीं वर्ष गांठ' पर बसन्त मेला लगा हुआ था ।

शाम को श्रीमती दामगार के घर एक और साक्षात्कार हुआ तथा चैकोस्लोवाकिया की समाजवादी व्यवस्था पर चर्चा हुई । यह भी महसूस किया कि यहाँ के निवासी ज्यादातार उदास से रहते हैं । प्राहा की तुलना मिश्रजी ने इलाहाबाद से भी की है । कार्लोवीवारी जाते समय मार्ग में बीरान से गाँव देखे और स्लावकोफ जंगल तथा डौपपस्के की पहाड़ियों के मध्य वही कार्लो बावारी नगरी सुन्दर स्पा (हैल्थ रिसोर्ट), तेपला नदी और मिनिरल वाटर का प्रसिद्ध

झरना । जेबराग जोन से पहले ईरजी से झड़प हुई और तत्पश्चात् संस्कृति मंत्रालय में गोलमेज बैठक में हिस्सा लेकर ईरजी मुझे होटल में छोड़कर चला गया । ट्राम के द्वारा वल्तावा नदी के पार जाकर इयरास्कूब मौस्त और लौटकर चार्ल ब्रिज पहुँचकर छः बजे घड़ी का खेल देखा वात्स्लाफस्के सड़क पर खूबसूरत फब्बारा देखता हुआ म्यूजियम की ओर गया । ट्राम द्वारा वापस होटल ।

अगले दिन चार बजे से पहले स्वातोप्लुका चेखा मौस्त पर हाथों में फूल लिए परियों की मूर्तियाँ देखीं और यलीनिक के आने से पूर्व ही होटल लौट आया । यलीनिक दर्शन शास्त्र पढ़ाने के बाद अब जापानी दूतावास में ड्राइवर-कम-कल्र्क हैं एवं श्री निर्मल वर्मा के दोस्त भी हैं । अगले दिन मैडम बर-बोरा से होटल में ही भेंट और संस्कृति विभाग में पुनः बैठकों में भाग लेकर सालास्माना चौराहे पर पुरानी इमारतें देखीं । एक अधेड़ व्यक्ति से बताकर मालूम किया कि 68 के बाद भी यहाँ माली हालात ठीक नहीं हैं । शाम को बरबोरा के साथ-लब ओन साइकल-फिल्म देखी । सुबह राइटर्स यूनियन के कार्यालय में श्री फ्ल्यूडेक और दो महिलाओं (एक सम्पादिका और एक विदेशी लेखकों के स्वागतादि की इंचार्ज) से वार्तालाप करते हुए फ्रैंच गार्डन और अंग्रेजी गार्डन देखते रहे । शाम को यलेनिक आ गए और दोनों अक्टूबर क्रान्ति चौराहे पर गए जहाँ लेनिन की मूर्ति भी थी यलेनिक से भी कुछ विवशता निराशा और उदासीनता की झलक हाथ लगी । दूसरे दिन स्वातोप्लुक होने का पत्रिका के सम्पादकों से बातचीत कार्यक्रम और दो बजे साहित्यिक म्यूजियम का कार्यक्रम हुआ । यह म्यूजियम दुनियाँ का सबसे बड़ा म्यूजियम बताया गया तथा बहुत सी कहानियाँ सुनीं । होटल पहुँचते ही दूतावास की चैक लड़की आ गई और कहने लगी भावुक होने के कारण हिन्दुस्तानी अच्छे नहीं लगते, जबकि "रेशनल" अमरीकी अच्छे लगते हैं । अगले दिन ओदे ओन प्रकाशन के सम्पादकों से वार्ता तथा शाम को यलेनिक और ओंदा के साथ मिलकर मिलकुश की तरह गए । यलेनिक से वार्ता के बाद यही लगा कि प्राहा की खूबसूरती उदासी में दबकर कराहती रहती है ।

चोटियाँ -

प्राहा सेंट्रल रेलवे स्टेशन पर बड़ी कठिनाई से रेल पकड़कर और रेलगाड़ी में मुश्किल उठाकर पोपरात पहुँचे और वहाँ से ट्राम द्वारा स्तरी स्मोकोवैल्स, एक छोटा सा स्टेशन जहाँ पवैल नामक दुभाषिया मिला । मिश्रजी, बरबोरा और पवैल तीनों ही सैलिस्को चोटी की यात्रा पर गए । केबिलकार से चोंटी पर चढ़े और बरबोरा नीचे ही छूट गयी । धूप में सेलिस्को का टीला उजला था और ऊपर स्कालनाते प्लेस गए, लौटते समय पवैल ने चैकोस्लोवाकिया के बनने की कहानी सुनायी ।

डैन्यूब के साथ-साथ -

यह हंगरी देश की यात्रा की घटना है । ब्रातिस्लावा डैन्यूब नदी के तट पर स्थित है, वहाँ के डेविन होटल कमरा नं0 420 में ठहरा और पवैल के जाने के बाद प्यार करते जोड़ों के शहर की झाँकी देखी । रात को भी डैन्यूब नदी की जल धारा में बल्वों की तैरती रोशनी का आनन्द लिया । काले पुरू पर लिखा देखा सभी देशों के प्रोलेतेरियल एक हो जाओ । फिर बुदापैस्ट (बुडा पेस्ट) के लिए रवाना हुआ । वहाँ शाम को अकेले ही डैन्यूब के किनारे का दृश्य देखा । $3\frac{1}{2}$ घंटे विलम्ब से चलने वाली रेल से बुडापेस्ट पहुँच गया वहाँ मारिया हरजोग एस्कोर्ट मिली और गैलेर्त होटल में ठहरने का प्रबन्ध कर शाम को फिर डैन्यूब नदी के तट पर जा पहुँचा । नदी के किनारे यहाँ पर भी प्यार करते जोड़े, आज इसके साथ तो चंद दिनों बाद उसके साथ, अस्थायी प्यार । अगले दिन सबेरे उठकर नदी के उस पार शौपिंग का चक्कर और $10\frac{1}{2}$ बजे मारिया के साथ इंस्टीटयूट आफ कल्चरल रिलेशंस की बैठक में । प्रोग्राम शिथिल ही रहा किन्तु अगले दिन लेखक संघ के जनरल सेक्रेटरी द्वारा 11 बजे स्वागत कार्यक्रम रखा गया । शुक्रवार को मारिया के साथ लेखक संघ के जनरल सेक्रेटरी गाबोर गराइ से मुलाकात हुई । संस्कृति संस्थान जाते हुए भूमिगत रेल से यात्रा की जो योरोप की प्रथम भूमिगत रेल थी । शनिवार को बुदापैश्त की मुख्य सड़कों और बाजारों जैसे एंगेर्स टेर, बरूशमार्ती टेर का दृश्य देखा तथा कासिल, कृत्रिम झील, म्यूजियम, स्क्वैयर व।

आनन्द लिया । हिल्टन होटल के बगल के चर्च में जाकर तुर्की कला का नमूना देखा । घूमते-फिरते एक रोमांटिक सड़क पर प्राचीन शैली के एक दो लैम्प-पोस्ट भी देखे । डैन्यूब पर बुदापैश्त शहर के निकट अनेक द्वीप हैं । मार्मिट द्वीप में पार्क और ग्रैंड होटल है । खूबसूरत पार्लियामेन्ट की इमारत है । शाम को थियेटर का शो खत्म करके निकलते ही औत्रो और वान गेट पर ही मिल गए । इतवार को प्रातः आठ बजे मारिया के साथ पानी के जहाज पर गए, इस पिकनिक के ही समय किंगमाचाश अन्तिम राजा की घटना सुनायी । कस्बे का चक्कर लगाकर नेशनल गैलरी और वर्करस मूवमेंट के इतिहास का म्यूजियम देखा । सोमवार को नौजाबिलाग (विश्व साहित्य पत्रिका) के सम्पादक लासलौकेरी से दिलचस्प वार्ता हुई । 12 बजे मारिया के साथ हंगेरियन बीकली से साक्षात्कार और शाम को 7$\frac{1}{2}$ बजे भारतीय दूतावास के कल्चरल अटैची श्री गुलियानी के यहाँ खाते हुए महसूस किया कि उनकी विदेशों में रहने की इच्छा नहीं है ।

बलातोन झील -

सिग्लीगेट में 2-3 दिन तक "राइटर्स होम" का कार्यक्रम था । दो रेलगाड़ियां बदलकर मिश्रजी मारिया के साथ बदाचोनी स्टेशन पहुँचे, वाइन के लिए प्रसिद्ध स्थान यहाँ बातचीत के दौरान मारिया की जीवनी ज्ञात हुई कि वह यहूदी है । ईरोक ओल्को तोहाजा-राइटर्स होम, जहाँ कभी दो अविवाहित बुढियाँ इस आलीशान मकान में रहती थी, अब यह इमारत लेखक संघ के कब्जे में है । लंच में 57 वर्षीय समाजशास्त्री श्री मार्कुश इश्तवान से मित्रता हो गई । बलातोन झील जाते हुए रास्ते में हंगरी की राजनीति पर वार्ता हुई । बुलातोन न केवल हंगरी की, बल्कि पूरे यूरोप की सबसे बड़ी झील है । इसे हंगरी का समुद्र भी कहते हैं । करीब 80 किमी0 लम्बी झील है । पर्यटकों के लिए सर्वाधिक आकर्षक स्थल है । शाम को श्री मार्कुश के प्रयत्न से लाउंज में दो लेखकों के साथ बातचीत तय हुई । रूस के कम अन्नोत्पादन की बात सुन "मारिया के साथ वे दोनों लेखक भी गंभीर हो गए" अगले दिन सुबह सिग्लीगेट कासिल के खंडहर देखने चले गये । साथ में 'पाश लायोश' एक

नौजवान कवि भी था । शाम को मार्कुश के साथ तोपोल रूहा देखने गये । एक छोटा सा कस्बा । बीच से होते हुए बड़ी दिलचस्प जगह वार लोग देखते हुए लौटकर "राइटर्स होम" में खाना कि मारिया वाइन सेलरों के निमंत्रण लाती है और शनिवार को बुदापेश्त में अपनी दूसरी शादी का भी बुलावा देती है । रात को वाइन सैलर के यहाँ बातचीत के दोर चले । सबेरे मारिया आई और चली गयी । मिश्र जी मार्कुश के साथ ही बलातोन झील की दूसरी तरफ घूमने गए । फोन्योद पर्यटकों में खासी लोकप्रिय जगह है । थोड़ी देर फोन्योद की सड़कों पर घूम-फिर कर लौट आए । अनेक सुहावने दृश्य देखे और शाम को ही मार्कुश से विदा ली । सबेरे मारिया ने वाइन सैलर की दावत के 100 फारिन जमा कराये और बुदापैश्त पहुँचकर अगला कार्यक्रम बनाया ।

तलाश किसकी -

मिश्र जी अपना सामान सँभालकर आस्ट्रिया के शिलिंग्स के बदले फौरिन्स लेकर शाम को आठ बजे होटल के लाउंज में वापस आ गए, जहाँ एक गोरी सी महिला से बात हुई । भारतीय कपड़ों के क्रय-विक्रय पर खेद व्यक्त करती हुई वह चली गई और लेखक देखता ही रह गया ।

वापसी -

योरोप के विषय में मिश्रजी ने अनुभव किया कि यह सभ्यता का प्राचीनतम भू-भाग है । सभ्यता के विकास के दौरान योरोप ने ही बड़े-बड़े संघर्ष झेले थे । अनेक क्रान्तियाँ और दो-दो विश्वयुद्ध भी । विकास की चरम सीमा पर पहुँचा हुआ योरोप, सभ्यता का अग्रदूत योरोप आज कुछ पीछे हट रहा है, जहाँ युद्ध की तैयारियाँ हो रही हैं, साम्राज्यवाद के नये रूप और संकुचित राष्ट्रवाद पनप रहे हैं, ये वापसी के अध्याय ही हैं । भारत जैसे विकासशील देश सभ्यता की भाँति असभ्यता की इस वापसी में भी पीछे ही हैं । आज अमेरिका और रूस का प्रभाव सर्वत्र परिलक्षित हो रहा है । अफगानिस्तान जैसे देश इस प्रभाव के शिकार भी हो

रहे हैं । भारत इस मामले में विचित्र समझदारतीसरा ही देश है जो इन दोनों से प्रभावित भी है और अप्रभावित भी । ऐसा बहुत कुछ अनुभव करके मिश्रजी वापस भारत को लौट आये ।

उपलब्धियाँ -

"दरख्तों के पार.....शाम" यात्रा वृत्त की भी अपनी कुछ उपलब्धियाँ और विशेषताएँ हैं । इस पुस्तक की समीक्षा पूर्ण विशेषताओं की ओर संकेत करते हुए श्री ओम प्रकाश सिंह ने लिखा है -

"हमारे यहाँ लगभग हर व्यक्ति में यूरोप को लेकर मिथकीय धारणाएँ हैं - महिलाहीन होती महिलाएँ, शराब के नशे में खोते पुरूष, बच्चों से बचते दम्पत्ति, काले महायुद्धों की काँपती परछाई, मानव के अकेले होते द्वीप आदि-आदि को लेकर और गोविन्दजी इन्हीं अवधारणाओं पर वहाँ के जीवन को, कभी-कभी तो अपने-आपको दोहराने की दृढ़ तक, कसते चले जाते हैं । किताब खत्म हो जाती है, इन्हीं कसौटियों में - और तब आप सहसा चकित रह जाते हैं कि अरे, बिना किसी दावे के, बिना किसी मार के, सारे मिथक धराशायी कैसे हो गए .... ।"

वे पुनः आगे लिखते हैं - यात्रा वृत्त एक विवेकशील सुसंस्कृत की समूची पश्चिमी संस्कृति पर खोजपूर्ण टिप्पणी के रूप में उभरता है । × × × दौरा इस मामले में भी एक उपलब्धि है कि आदमी घुसे तो ठेठ पूँजीवादियों के बीच से और निकले लाल चोगड्डों के बाहर से । तो दोनों चीजों के मिलान की नियति तो बेचारे दर्शक को स्वतः सौंप दी जाती है ।"[1]

अपनी प्रस्तावना - "विधागत सीमाओं के बाहर" - मैं लेखक श्री गोविन्द मिश्र ने स्वयं अपनी यात्रा के महत्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा है - "यात्रा और जीवन के दूसरे अनुभवों में काफी फर्क है । जहाँ दूसरे अनुभव हमें साफ-साफ जोड़ते-तोड़ते हैं.... वहाँ यात्रा दूरी रखते हुए भी पास लगती है । हम जैसे अपने खोल से निकलकर संसार की

1- गुंबदों से उतरकर जीवन में धँसने की यात्रा - (गोविन्द मिश्र - सृजन के आयाम - प0 325 से)

व्यापकता को छूते होते हैं । व्यापकता की यह छाँह दुःखी व्यक्ति को टूटने से बचाती हैं । स्वयं से वैराग्य और बाहर से जुड़ना-दोनों एक साथ होता चलता है ।"[1]

इस कथन से तो यही अभिप्राय निकलता है कि मिश्रजी का यह विशेष अनुभव रहा है कि यात्रा दो व्यक्तियों, दो समाजों, दो कोमों यहाँ तक कि दो देशों को निकट लाकर उन्हें जोड़ने का कार्य करती है ।

वे आगे फिर लिखते हैं - "इस दृष्टि से यात्रा अपने आपको सन्दर्भों में रखने, उनसे जोड़ने और इस तरह उसे सही-सही आँकने का मौका भी हमें देती है, चुलघुस में बन्द हमारे छोटे से जीव को बाहर खींच ले जाती है । यात्रा अगर हमें कृशकाय करती है तो भीतर मन की कुँठाएँ और विरूपताएँ भी छटती चलती हैं ।"[2] तात्पर्य स्पष्ट है कि यात्रा के माध्यम मनुष्य का हृदय जहाँ आत्म निरीक्षण करता है वहीं अन्य सहयात्री के मनोभावों के माध्यम से अपने मनोविकारों के प्रति भी साफ होता जाता है । उसकी मानसिक दुर्बलता क्षीण होकर विचार शक्ति विकसित होती है तथा आत्मकुंठाएँ और विरूपताएँ भी समाप्त प्राय होकर आत्म बल को बल मिलता है । यात्रा के द्वारा किसी स्थल विशेष देश-विदेश आदि का आँखों देखा चित्रण ठीक-ठीक रूप में किया जा सकता है क्योंकि यात्रा के अभाव में किसी स्थान का चित्र ही मानस पटल पर नहीं उभर सकता । मिश्रजी ने संकेत किया है - "..... उनके बिना किसी जगह का आकार ही नहीं बनता मन में । जब तक उससे सम्बन्धित खास-खास बातें न जान ली जायें, हम एक जगह को सही-सही पहचान ही नहीं सकते । उसके व्यक्तित्व की आँच महसूस करना तो दूर की बात है, इसी तरह यात्रा की बराबरी से चलती अन्तः प्रतिक्रियाएँ, मन की कुलबुलाहटें...... यह भी उतनी महत्वपूर्ण हैं ।"[3]

इस कथन से स्पष्ट होता है कि किसी स्थान की सही पहचान अर्थात भौगोलिक सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, आर्थिक और साहित्यिक परिस्थितियों का परिचय यात्रा के बिना सम्भव नही है । इस विचार से यात्रा अपने में अत्यन्त उपयोगी, महत्वपूर्ण और

---

1. दरख्तों के पार --- शाम - ले० गोविन्द मिश्र - पृ० 5
2. — वही — - पृ० 6
3. — वही — - पृ० 6

उपलब्धिदायक होती है । उपर्युक्त संकेतों एवं तथ्यपूर्ण विवरणों के आधार पर "दरख्तों के पार.....शाम" यात्रा ग्रन्थ की उपलब्धियाँ एवं विशेषताओं की समीक्षा निम्न प्रकार की जा सकती है -

यात्रा देशों का सही ब्यौरा -

"दरख्तों के पार......शाम" यात्रा वृत्त में गोविन्द मिश्रजी ने तीन यूरोपीय देशों पश्चिम जर्मनी, चैकोस्लोवाकिया ओर हंगरी की वस्तु स्थिति को घूम फिरकर जानने की बहुत ही सफल चेष्टा की है । भौगोलिक स्थिति का सही आंकलन और चित्रण तो किया है, वहाँ की सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनीतिक और साहित्यिक परिस्थितियों पर भी दृष्टिपात किया है । यही कारण है कि विभिन्न ऐतिहासिक इमारतों का वर्णन करते हुए सन (वर्ष) का उल्लेख किया है ।

दायित्व के प्रति सतर्कता -

समय-समय पर और विशेष स्थानों पर मिश्र जी को सहायता के लिए जो ऐस्कार्ट या दुभाषिये नियुक्त किए गए थे वे यथा समय उपलब्ध हुए तथा अपने कर्तव्य का निर्वाह करके ही उनसे विदाई ली ।

वैवाहिक बन्धनों से दूर -

इस यात्रा के दौरान मिश्रजी के यह भी अनुभव किया कि यूरोपीय देशों में स्त्री-पुरूष आजीवन वैवाहिक बन्धनों में नहीं बँधते जैसे कि भारत में । उनका प्यार भरा संसार अस्थायी होता है, विचारों का मेल खाने तक ही युवक-युवतियाँ एक साथ रहते हैं, किन्तु जहाँ वैचारिक भिन्नता आई कि तलाक देकर अलग-अलग और फिर नये सिरे से नये साथी की तलाश । कई ऐस्कोर्ट और साथी इसी स्थिति वाले मिले थे ।

साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्थाओं की स्थिति -

मिश्रजी को जिस उद्देश्य से इस यात्रा पर आमंत्रित किया गया था वह उद्देश्य तो कुछ शिथिल ही लगा, क्योंकि यहाँ की साहित्यिक संस्थाओं एवं संस्कृति विभाग के क्रिया कलाप एवं बैठकें कहीं औपचारिकता पूरी करने भर को थी तो कहीं अनौपचारिक तथा यत्र-तत्र बैठकों में शिथिलता भी दृष्टिगत हुई । एक स्थल पर लिखा है -

"बैठकें खत्म होने तक थकान और उबास से भर आया था मन ।"[1]

"डैन्यूब के साथ-साथ" वृत्त में भी इस ओर संकेत किया है -

"यहाँ भी प्रोग्राम की ढीला-ढाली है । × × × प्राहामें अपनी दुर्दशा कराकर अब मैं कुछ अनुभवी हो गया था । × × × हाय-हाय रे लेखक संघ ।"[2]

नारीत्व के प्रति -

यूरोपीय देशों की यात्रा के दौरान मिश्रजी ने यह भी अनुभव किया कि इन देशों की स्त्रियाँ स्त्रीत्व से विहीन होती जा रही हैं और वे पुरूष का अनुकरण करते हुए पुरूषों पर अधिकार जमाने का प्रयत्न-सा करती दिखाई देती हैं । बच्चों के बोझ से भी वे बचना चाहती हैं । इस सन्दर्भ में मिश्र जी के कतिपय कथन यहाँ उद्धत किए जा सकते हैं - "दूसरे दिन सुबह रिनेट ने फिर हल्ला मचा दिया । × × × उसकी डाँट और परेशानी साथ-साथ चलते। एक जुमला बोलकर वह दूसरी तरफ घूम जाती, बाल और छितरा जाते । हमारे यहाँ पागल औरतें जैसे घूमती हैं और बकती रहती हैं .....[3] × × × ... लेकिन यहाँ औरतें शायद

1- दरख्तों के पार .... शाम, पृ0 57.
2- वही, पृ0 143.
3- वही, पृ0 22-23.

आदमी के लिए जरा भी झुकना नहीं चाहती, इसमें अपनी तौहीन देखती हैं । "पश्चिमी औरतें आदमी के कद तक उठने की पशोपेश में यह खूबसूरती करीब-करीब खो बैठी है ...... ।[1]

जर्मन लड़कियों के प्रति व्यक्त विचार -

"जर्मन लड़कियों के छातियाँ कम होती हैं ..... या आदमी होने के चक्कर में उन्हें दबाकर रखा जाता है ।"[2]

अच्छे देश -

मारिया हरजोग यूरोपीय देशों को एशियाई देशों की अपेक्षा अच्छा और ईमानदार कहती है । उसका कहना था - "कि यह एशिया नहीं है कि यहाँ चोरी बेईमानी हो ... चश्मा मिला होता तो दुकान वाले जरूर बता देते ....।"[3]

यद्यपि कुछ सीमा तक ये देश किसी दशा में अच्छे हैं, धनी हैं, प्राकृतिक सौन्दर्य और सम्पदायें अग्रणी हैं, किन्तु मिश्रजी को भी यहाँ बेईमानी नजर आयी है । इसीलिए उन्होंने लिखा है - "और मारिया कहती है कि यहाँ लोग बेईमान नहीं हैं । काम चोरी, गलत तरीकों से पैसे कमाने, रईस होने की आदमी की सहज-प्रवृत्ति कहाँ जाएगी ।"[4]

एक और स्थल पर - "हमारे उतरते ही ड्राइवर ने साबुत टिकटों को इकट्ठा किया और गिनकर अपनी जेब में डाला । उन्हें वह होटलों में बेच देगा और जहाँ से फिर

1- "दरख्तों के पार.......शाम" पृ0 26.
2- वही, पृ0 34.
3- वही, पृ0 144.
4- वही, पृ0 145.

हम जैसे विदेशी उन्हें खरीदेगें । मारिया गलत कहती थी कि यहाँ बेईमानी नहीं है । पैसा येन-केन-प्रकारेण कमाने की आदमी की बुनियादी प्रवृत्ति है ।"[1]

न्यायालयों की भिन्न शैली -

जर्मनी देश में न्यायालयों की कार्य शैली भारत की न्याय शैली से भिन्न दिखाई देती है । यहाँ के न्यायालयों पर लिखते हैं - "कोर्ट जैसा कुछ नहीं लगता यहाँ - जैसा साफ सुथरा कोई दफ्तर हो । अन्दर जज, प्रौसीक्यूटर और प्रोटोकोल इंचार्ज अपने-अपने चोंगे डाले एक लाइन में । नीचे एक मेज पर वकील और मोवक्किल ।..... × × चपरासी की जरूरत नहीं थी, जज स्वयं माइक से बुला लेता था । हर एक अलग-अलग बयान, सवाल-जबाब । ऐंगिल्स और उसके साथी बारी-बारी से नीचे पड़ी एक खास कुर्सी में बैठे - बैठे ही जज को जबाव देते रहे । एक हमारे यहाँ की सामन्तवादी परम्परा है ......।[2]

इस सबसे यही निष्कर्ष निकलता है कि गोविन्द मिश्र ने अपनी यूरोपीय देशों से हिन्दी साहित्य प्रेमियों को कुछ न कुछ उपलब्धि कराई है । वस्तुतः देखा जाये तो यह सबसे बड़ी उपलब्धि है कि पाठक घर बैठे ही जर्मनी, चैकोस्लोवाकिया और हँगरी देशों की यात्रा का आनन्द प्राप्त कर लेता है, वहाँ के भौगोलिक दृश्यों के मानो समीप ही पहुँचकर सुखानुभूति करता है और विभिन्न सामाजिक व सांस्कृतिक परिस्थितियों से परिचय पाकर स्वयं भी आलोचन के प्रति आकर्षित होता है ।

भाषा और शैली -

कहानियों, उपन्यासों और अन्य दो यात्रा वृत्तों के समान ही मिश्रजी के इस वृत्त की भाषा और शैली परिलक्षित होती है । सर्वाधिक मिश्रित भाषा का प्रयोग करते हुए यत्र-तत्र

1- "दरख्तों के पार.......शाम" पृ0 151.
2- वही, पृ0 36.

मुहावरों का भी पुट दे दिया है, फलतः शैली भी सहज, सरल, सुबोध, वर्णनात्मक और विचारात्मक बन पड़ी हैं । कुछ उदाहरण :- "छोटा सा दूर भागते को लंगोटी भली । चलते चलते झाँक आये । बस से उतरते ही नोइहाउस मिला गया । वह बड़े ही आत्मविश्वास से कहता है - "हर चीज का प्रबन्ध ठीक-ठीक हो गया है, कोई चिन्ता नहीं, अपने एक मात्र हाथ से सामने छोटा आर्क-सा खींचता हुआ । अच्छा आदमी निकला.."।[1]

झूलती जड़ें -

यात्रा वृत्त पर यह गोविन्द मिश्र की तृतीय पुस्तक है । पिछली पुस्तकों की वस्तु विवेचना से स्पष्ट प्रतीत होता है कि उनमें विदेश यात्रा पर केन्द्रित यात्रा वृत्त रखा गया है । मिश्रजी ने लिखा भी है - "अभी तक यात्रा की मेरी दो ही पुस्तकें आयी हैं, "धुँध भरी सुर्खी" और "दरख्तों के पार.....शाम" । दोनों ही विदेश यात्रा पर केन्द्रित हैं । अपने देश में यात्रा पर यह मेरी पहली पुस्तक है ..... उन यात्रा लेखों का संकलन जो अलग-अलग समय में लिखे छपे ।[2]

इससे ज्ञात होता है कि यह पुस्तक स्वदेश की आन्तरिक यात्रा पर आधारित है । लेखक ने भारत देश के विभिन्न दिगंचलों की यात्रा करके यह सिद्ध कर दिया है कि हम अकारण ही विदेश यात्रा के लिए लालायित होते हैं, अपने ही देश में ऐसा क्या कुछ नहीं है, जो विदेश में है । उन्होंने संकेत भी किया है -

"इस बीच बराबर यह लगता रहा है कि व्यर्थ ही हम विदेश यात्रा के लिए लार टपकाते रहते हैं । अपने देश में क्या नहीं है - बर्फ, पहाड़, मैदान, रेगिस्तान, जंगल, नदियाँ, समुद्र, इतिहास, भूगोल, संस्कृति, सभी कुछ तो है यहाँ । विदेश यात्रा में जानने की उत्कंठा अक्सर महसूस करने की प्रक्रिया को दबा देती है .... जो कि जानने वाला पक्ष भी महत्वपूर्ण है ।"[3]

1- "दरख्तों के पार ..... शाम" पृ0 85.
2- "झूलती जड़ें" (भूमिका से), गोविन्द मिश्र -7
3- वही, पृ0 7.

इस प्रकार गोविन्द मिश्र की देश-विदेश की यात्राएँ कुछ जानने, समझने, महसूस करने और साक्षात् प्राकृतिक अनुभव करने के उद्धेश्य से ही की गई है । मिश्रजी इन यात्राओं के माध्यम से कुछ सीखना और उपलब्ध कराना चाहते हैं । प्रस्तुत यात्रा वृत्त "झूलती जड़ें" छह भारतीय प्रान्तों की यात्रा पर लिखा गया है - ये हैं मध्य प्रदेश, अंडमान निकोबार द्वीप समूह, राजस्थान, महाराष्ट्र, केरल और पूर्वोत्तर राज्य (पूर्वांचल) । "झूलती जड़ें" यात्रा वृत्त पुस्तक का क्रमशः वस्तु विवेचन अग्रलिखित है ।

1- **सभ्यता के सर्वों के बीच बस्तर -**

बस्तर मध्य प्रदेश राज्य का एक हिस्सा है जो रायपुर के समीप आदिवासी क्षेत्र है जहाँ से उड़ीसा राज्य की सीमा कुछ ही दूर रह जाती है । मिश्रजी ने यह यात्रा भारतीय आदिवासियों और उनके जीवन परिवेश को देखने के लिए क्षेत्र का भ्रमण किया है ।

कोत्तवलसा स्टेशन पर आदिवासियों के मिलने के साथ ही यात्रा शुरू होती है । पैसेंजर रेलगाड़ी, भीड़ से भरा डिब्बा, उसमें भी निरीक्षण ट्राली का सामान ठूँसने से और भी परेशानी बढ़ गई । रास्ता गहरी घाटियों, घने जंगल, सूखी नदी नाला जिसमें कहीं-कहीं हरियाली भी थी । शिमिलगुडा होते हुए जगदलपुर पहुँचे, वहाँ एक घंटे रूककर बचेली के लिए जाना हुआ । यहाँ हफ्ते में एक दिन बाजार लगता है । गीदम तहसील के बी0डी0ओ0 (विकास खण्ड अधिकारी) जोशी से मुलाकात हुई और उनके साथ घोटपाल गाँव का मेला देखने गए । यह मेला आदिवासियों के लिए एक विशेष अवसर होता है जब वे दो-तीन दिन के लिए इकट्ठे होकर खाते-पीते, सोते और नाचते-गाते हैं । आदिवासियों की इस बस्ती में फासले पर बाँसों की बनायी गयी चाहरदीवारी वाले घर । वे भी घास फूस के ढके हुए । यहाँ विवाह के रीति रिवाज ही कुछ विचित्र और भिन्न हैं । यही जोगा और लवमी दो आदिवासियों की दो भिन्न-भिन्न तस्वीरें देखने को मिलीं । पहली तस्वीर परेशानी और सभ्यता की आँच में झुलसती हुई और दूसरी शून्य, निर्विकार और आधुनिक सभ्यता के स्पर्श से

दूर । बस्तर में ही आदिवासियों के लिए सुरक्षित ग्राम अबूझमाड़ भी गए, जहाँ उन्हीं का आधिपत्य था और रेवेन्यू कानून भी लागू नहीं । वहीं ग्राम सेवक बोमटवार से परिचय हुआ तथा बेला-डीला के गोपाल भी मिले । शंकिनी और डंकिनी नदियों के दो आब में धंतेवाडा, जहाँ मुर्गा - लड़ंत का तमाशा देखा ।

अगले दिन बोमटवार के साथ हदबाड़ा गए जहाँ इन्द्रावती नदी बह रही थी, उसी के पार अबूझमाड़ा का क्षेत्र, रात को जीप से चलते चले गए, लेकिन रास्ता भूलकर भटक गए । मार्ग में एक ट्रक आता हुआ मिला, तब पूछने पर हंदवाड़ा के सही रास्ते पर आये वहाँ एक छोटी सी वस्ती से पैकू नामक लड़का साथ लिया और सिर्फ पगडंडी वाले रास्ते से ही जीव को ले जाते हुए हंदवाड़ा के स्कूल में पहुंचे वहाँ स्कूल के लिए बनाया गया एक घर था, वहाँ आदिवासी लड़के पढ़ते और रहते हैं तथा आदिवासी युवक ही पढ़ाते हैं । यही एक भयानक आकृति वाले उघारे वदन वाले व्यक्ति से भेंट हो गई जो हंदवाड़ा के पटेल कोट थे । यहाँ के गाइंदर वाले पर शौचादि से निवृत्त होने के लिए जाया जाता था । यहीं बिजा (मुखिया), पीड़ (सरपंच) और दो-चार लोगों से परिचय हुआ । यहाँ असली खेत पहाड़ों पर है और मुख्य फसल धान, तम्बाकू कोसरा है । कोसरा कोई खाद है जिसे महुआ या सैम जैसी सब्जी में मिलाकर खाते हैं । जल की असुविधा है । हमारे चलते समय पटेल सबकी ओर से रूपया माँगने लगे, जिसे देखकर मिश्र जी को अफसोस हुआ । लौटते हुए पैकू को कौशल नगर छोड़ दिया और वहाँ के वन-विभागीय कानूनों का कड़ाई से पालन होते हुए देखा । यहाँ के नौजवान अपने पास सुरक्षा हेतु धनुष बाण लिए रहते हैं । यहाँ भी गाँव के पटेल आ गए और तरह-तरह के सवाल पूछने लगे - क्यों आये, कहाँ से आए, क्यों पूछ रहे हैं ? फिर जगदलपुर में एक रात बिताकर अगले दिन बस्तर के दक्षिण पूर्वी क्षेत्र के तिरया गाँव में जहाँ सघन और सुन्दर जंगल हैं, पहुँचे । यही पर सबरी (कोलब) नाम की बड़ी नदी देखने को मिली, जिसमें गणेश बाहर छोटी सी नदी भी आकर मिलती है । खूबसूरत दृश्य । यही नानपुर कस्बा, यहीं पर मोंगरा जी हमारे साथी हुए । ध्रुवा जनजाति के लोगों का क्षेत्र है ।

यहाँ मोंगरा जी गाँव के कोटवार हैं जो चौकीदार जैसा पद होता है । नरभक्षी, पशु चीता, वगैरह को ये लोग ढोल बजाकर ही भगा देते हैं या धनुष-बाण की सहायता से मार भी देते हैं, पक्के निशानेबाज होते हैं ये लोग । यहाँ से हम लोग घने जंगल के बीच गुप्तेश्वर मंदिर तक गए, जहाँ के घने पेड़ों के बीच से सूर्य का प्रकाश बड़ी मुश्किल से नीचे पहुँच जाता है । घुमावदार सबरी नदी और चट्टानों के अद्भुत दृश्य के बीच बना है यह मंदिर सौ सीढ़ियां ऊपर चढ़कर । गुफा में बिजली की रोशनी थी । शिवरात्रि को यहाँ बड़ा मेला लगता है और यही पास में उड़ीसा की सीमा है ।

नारायणपुर बस्तर के आदिवासियों और शहरी आदिवासियों के बीच एक पुल सा है जो घोटुलों के लिए प्रसिद्ध है । रायपुर से लोग पिकनिक मनाने यहाँ आते हैं, बाह्य सम्पर्क के कारण यहाँ के लोगों में भी कुछ दोष व बुराइयाँ आ गई हैं । नाच गाना खूब होता है । एक रात को हमने लड़के-लड़कियों का नृत्य भी देखा । तब का नृत्य और संगीत आज की अपेक्षा निर्दोष था । मैंने एक गीत का अर्थ अपने मित्र से समझा ।

"निमायो निमा निमायो बोरू
माकु आयो मिनु वस्ता ।

2- **काला पानी के इतिहास में उतरता "अंडमान-निकोबार"** -

बंगाल की खाड़ी में भारतीय समुद्री सीमा में स्थित संघीय क्षेत्र अंडमान-निकोबार द्वीप समूह को "काला पानी" कहते हैं । गोविन्द मिश्र ने इस सुन्दर समुद्र से घिरे क्षेत्र की भी यात्रा की थी । यहाँ लगभग 10 महीने वर्षा जैसा मौसम रहता है, सिर्फ दिसम्बर और जनवरी के महीने ही भ्रमण के लिए अच्छे माने जाते हैं । सर्वप्रथम ईस्ट इण्डिया कम्पनी का लेफिटनेंट ब्लेयर सन् 1789 में यहाँ बस्ती बसाने आया और उसी के नाम पर पोर्ट ब्लेयर का नाम रखा गया । 1857 की क्रान्ति के क्रान्तिकारियों को सबसे पहले 10 मार्च, 1858 को

यहाँ भेजा, उस समय यह पूरा ही द्वीप जेल बन गया था । सन् 1901 के आसपास यहाँ सेल्युलर जेल बनी थी । केन्द्रीय बाचटावर (घंटा घर) के सात खंडों में से अब एक राष्ट्रीय स्मारक के रूप में प्रयोग किया जाता है, इसमें कुछ तो सुन्दर और अच्छी चीजे रखी हुई हैं, कुछ टिकटिकी जैसी भयानक वस्तुएँ भी हैं, एक हॉल में ज्ञात क्रान्तिकारियों के चित्र भी हैं । बगल में वीर सावरकरजी का कमरा है । इन सभी क्रान्तिकारियों के चित्रों को देखकर अलीपुर, लाहौर षडयंत्र, चौरी चोरा व चटगांव सशस्त्र क्रान्ति जैसी अनेक घटनाओं की स्मृति ताजा हो उठती है । यहीं अल्लामाफजल हक द्वारा लिखित "उल सूरत उल हिन्द" पाण्डुलिपि पुस्तक के पृष्ठ देखे जो मिर्जा गालिब से कहीं अच्छे थे । इस प्रकार सेल्युलर जेल मानो एक उत्स है ।

इसके बाद में आदिवासियों के क्षेत्र में स्थित संग्रहालय देखने गया, यहाँ सब औरत मिल भाषी और बंगाली हिन्दी बोलते मिलते. हैं । यहाँ अंडमानी, आंगियो, सोपेन, जरवा जैसी जातियों के आदिवासी रहते हैं । सोपेन शर्मीले तो जरवा खूँखार स्वभाव के हैं । अण्डीन की लड़ाई की घटना प्रसिद्ध है । शाम को कार्वाइन केव्य गए जो समुद्र तट है । 29 दिसम्बर, सन् 1943 को नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने यहाँ भाषण देते हुए इन द्वीपों को "शहीद" और "स्वराज्य" नाम भी दिया था ।

अगले दिन निकोबार द्वीप को देखने निकल पड़े जहाँ के समुद्र का पानी गहरा नीला है, उड़ने वाली मछलियाँ भी देखीं फिर कार निकोबार-गोल-गोल, खूबसूरत द्वीप को भी देखा जहाँ नारियल के पेड़ काफी मात्रा में खड़े थे और जापानियों द्वारा निर्मित एक मात्र पक्की सड़क थी । समुद्र तट बेहद साफ था । निकोबारियों की वेश भूषा वर्मा के लोगों से काफी मिलती-जुलती है । इनकी जीवन पद्धति सामूहिक होती है । गाँव का मुखिया कप्तान होता है, सभी मामलों में वही सर्वसर्वा होता है । इनके घर भी दो तरह के बने होते हैं - एक "पार्टी" गोलाकार झोंपड़ी जैसा और दूसरा टालिका आयताकार झोंपड़ी जैसा । घर विमान की तरह डंडों पर खड़ा होता है । ये लोग कुछ मस्त ही होते हैं तथा पान खूब चबाते हैं,

स्वभाव में मिठास होती है और हौल्यू (प्रिय दोस्त) कहने पर खुश हो जाते हैं । मुख्य भोजन पैडनेस और नारियल के अलावा चाय और चावल भी चलने लगा है । सहकारिता के नाम पर यहाँ इन लोगों के साथ ठगी ही की जाती है । यहाँ 'मेरी' "नाम्नी एक अधेड़ महिला ने अपने घर ले जाकर हमें स्वागत में एक सुन्दर शंख और 6-7 नारियल दिए ।

अगला पड़ाव ननकौरी था । जहाज के आने पर मानो यह पहाड़ियों से घिरा द्वीप जग उठता है निवासियों में हलचल होने लगती है । वे लोग पोर्ट ब्लेयर की ओर ही देखते रहते हैं कि कोई सूचना मिले । फिर भारत का अन्तिम छोर माने जाते ग्रेट-निकोबार द्वीप में पहुँचे जहाँ से इन्डोनेशिया कुछ 144 किमी0 दूर रह जाता है । यहाँ की मुख्य नदी गन्थियाँ का दृश्य देखने योग्य है । समुद्र में गिरने वाली इस नदी के एक ओर जंगल और पहाड़ियां, तो दूसरी ओर समुद्र । यहाँ अधिकतर भूतपूर्व सैनिक खेती-बाड़ी करते हुए रहते हैं । मल्थिया में मगर और घड़ियाल रहते हैं तथा इस द्वीप में मच्छरों का भी काफी आतंक छाया रहता है । यहाँ आदिवासियों की अपेक्षा बाहर से बसाये गए लोगों की संख्या अधिक है ।

इसके बाद रौस द्वीप देखा, नौ सेना के सिर्फ दो तीन ही कर्मचारी मिले तथा देखने को खण्डहर । चीफ कमिश्नर का बंगला भी वीरान पड़ा था, सामने सेल्युलर जेल । बंगले के ठीक दूसरी तरफ कब्रिस्तान है, कब्रों पर की गई लिखाई मुश्किल से पढ़ी जाती है - "1860-65 की फॅला तारीख को साथियों द्वारा किसी नौजवान अफसर की मधुर स्मृति में जो "नेटिव्स" द्वारा मारा गया, वह जो समुद्र में डूब गया, कोई बुजुर्ग ......।" नीचे उतरते हुए एक सरोवर भी देखा ।

इस प्रकार ये द्वीप मुख्य भूमि से दूर बिखरे-बिखरे हुए हैं । यहाँ सांस्कृतिक अभिरूचि का लोगों में विकास करने हेतु एक "नवपरिमल" नाम्नी संस्था भी चल रही है जिसके संचालक कविबंधु "मनुज" हैं । वापसी से पूर्व एक-दो गाँवों को भी देखने गए,

जहाँ कैदी स्त्रियों और पुरूष विवाह कर रहने लगे थे जिनमें बाँदा के भी थे - छेदू लछमन, मत्तू सिंह, जसवीर सिंह, गोवरधन, गनेश महाराज, शंकर पंडित, मुसई सिंह आदि-आदि मुसई सिंह इनके सरपंच या सरदार थे जो बाद में एक गाँव के चौधरी बने । यहाँ उनके पुत्र भगवान सिंह को देखा । एक पैनी-सी मधुर आवाज में गीत भी सुनने को मिला - जुलम कियो या केकैया .... । यही एक मंदिर में रिछपाल सिंह ढोलक लिये बैठे मिले । अजुध्या सिंह नाम के कैदी उनके दादा थे और वे ढोलक की थाप के साथ गाते थे । "नदियाँ डूबी जाय .... ।

इस प्रकार यह "काला पानी" का दृश्य हमारे मन में एक क्रान्तिकारी युग की स्मृति जगाता हुआ स्थित है ।

3- **तनिक हरि चितवौ जी मोरी और -**

इस यात्रा वृत्त में राजस्थान के मेवाड़ क्षेत्र और उसके आस पास के क्षेत्र का वर्णन प्रस्तुत किया गया है वीर योद्धाओं की भूमि मेवाड़ जहाँ का इतिहास बलिदान और जौहर की गाथाओं से भरा पड़ा है । सम्भवतः मेवाड़ ही भारत का ऐसा भू-भाग है जहाँ का तीर्थ मात्र कोई नदी या देवालय ही नहीं, समूचा भूखंड ही तीर्थ की भाँति प्रतीत होता है । अरावली की पहाड़ियाँ बहुत सुन्दर और अपनी लगती हैं । यह भीलों का क्षेत्र है, दिल्ली अहमदाबाद राष्ट्रीय राजमार्ग पर स्थित है । यही एकता-वर्णागत एवं साम्प्रदायिक एकता का प्रतीक ऋषभदेव केशरिया का भव्य मंदिर भी देखने को मिला । वीर राणाओं का मेवाड़, जहाँ मुगलों और अंग्रेजों के दाँत खटटे हो गए थे । इस भूमि का यह केशरिया मंदिर लगभग 1200 वर्ष पुराना है चारों तरफ अरावली की पहाड़ियाँ ।

इसके बाद हम लोग उदयपुर पहुँचे, एक सुन्दर नगर, भीलों और फुब्बारों का शहर- "भारत का वेनिस" नाम से प्रसिद्ध है । अनेक दर्शनीय स्थल हैं यहाँ । भारतीय लोक

कला मंडल के संग्रह में राजस्थान की संस्कृति के असंख्यों आयाम देखने को मिले । उदयपुर के अतुलनीय महल जो स्थापत्य कला के सुन्दर नमूने हैं । पिछौला झील के बीच एक प्रसिद्ध "लैक पैलेस" । उसके पीछे जग मंदिर जहाँ शायद शाहजादा खुर्रम को शरण दी गयी थी । पिछौला झील के साथ एक नटिनी के साथ महाराणा द्वारा किए गये छल की कहानी भी जुड़ी हुई है, कहते हैं उस घटना से अब तक कोई नट उदयपुर की सीमा में गया ही नहीं ।

यहाँ से श्रीनाथ द्वारा का मार्ग, जिस ओर चार ऐतिहासिक दरवाजे हैं । मार्ग प्राकृतिक सौन्दर्य, छोटे-छोटे सरोवरों और ऐतिहासिक अवशेषों से परिपूर्ण है । यहीं पहाड़ियों के बीच मेवाड़ से अधिपति "एक लिंगजी" का मंदिर । मंदिर के बाहरी प्रवेश द्वार पर राजचिन्ह और उसके नीचे अंकित है - विक्रम सम्बत 791, सन् 734, आर्य कुलकमल दिवाकर, हिन्दुवा सूर्य मेदपाटेश्वर, महाराणा मेवाड़ के इष्ट देव का निजी मंदिर । "सतयुग की गाथाओं से जुड़ा अति प्राचीन मंदिर । इन्द्र-वृत्तासुर युद्ध की घटना से सम्बद्ध कथा, त्रेतायुग में विश्वमित्र के भय से भयभीत नंदिनी की शरण कथा, द्वापर में तक्षक द्वारा जनमेजय के नागयज्ञ से डरकर छिपने की कहानी और कलियुग में बप्पा रावल और हरित ऋषि की कथा । बप्पा रावल ही मेवाड़ राज्य के संस्थापक माने जाते हैं तथा यह वंश सूर्यवंशी राम के पुत्र कुश का वंश माना जाता है । मंदिर में श्याम रंग की चतुर्मुखी प्रतिमा है । इसके चार द्वार हैं, जिनमें शिव-परिवार के चार सदस्य-पार्वती, गणपति, गंगा और कार्तिकेय विराजमान हैं । यहाँ के पुजारी ब्रह्मचारी हैं जबकि श्रीनाथ द्वारा में ग्रहस्थ । दर्शक दीर्घा में छह ताण्डव नृत्य के चित्र लगे हैं । यहीं इन्द्र सरोवर और उस पर प्राचीन महल हैं । दक्षिण की पहाड़ियों पर राजेश्वरी देवी का मंदिर है । पहाड़ियों के बीच रामा तालाब और नागदा के खंडहर हैं जिसे मेवाड़ की पिछली राजधानी कहते हैं । किन्तु खेद है कि प्रतिमाएँ प्रायः गायब हैं, एकाध है वह टूटी-फूटी (खण्डित) ।

इसके बाद हल्दी घाटी देखने को उत्सुक मिश्रजी उधर गए । आज भी हल्दी घाटी का स्मारक राणा प्रताप और मानसिंह के संघर्षपूर्ण युद्ध का स्मरण दिला रहा है ।

वस्तुतः तंग घाटी जहाँ की मिटटी का रंग भी हल्दी जैसा ही । प्रताप और अकबर की सेवा के मध्य की जाने वाली आँख-मिचौली की याद । चेतक स्मारक के पास ही एक छोटा सा शिव मंदिर भी है, जहाँ अनेक पद चिन्ह देखने को मिले ।

श्रीनाथ द्वारा में श्रीकृष्ण जन्माष्टमी का पावन पर्व मनाया जा रहा था, जहाँ भगवान श्रीकृष्ण का वाल स्वरूप सजाया गया था । अष्टायामी पूजा (मंगला से शयन) की जा रही थी, यहाँ भी ब्रजभूमि का रूप देखने को मिलता है । जन्माष्टमी के प्रातः ही लाड़ले लालजी का पंचामृत स्नान हुआ । रात बारह बजे 21 तोपों द्वारा श्रीकृष्ण के जन्म की सूचना दी गई, नन्दोत्सव हुआ और हवेली संगीत । लगभग ब्रज के सभी प्रसिद्ध रीति-रिवाज पूरे किये गये । दीपावली और अन्नकूट का उत्सव भी ब्रज परम्परा के अनुरूप मनाया जाता है । गोबर का गोबर्द्धन बनाकर पूजा की जाती है । डोल तिवारी में 125 मन चावलों का लूट द्वारा प्रसाद वितरण । जन्मोत्सव की एक छोटी सी लीला भी इस मंदिर में देखी ।

कहते हैं कि औरंगजेब के हिन्दू धर्म विरोधी आतंक से भयभीत होकर मेवाड़ के महाराणा ने जतीपुरा (ब्रज) से श्रीनाथजी को यहाँ लाकर प्रतिष्ठित किया था और कितने ब्रजवासी यहाँ आकर बस गए थे । मेवाड़ में पग-पग पर झीलें हैं । कांकरौली से आगे राजसमंद नामक एक विशाल जलागार है जो 6.4 किमी0 लम्बी और 3.2 किमी0 चौड़ी झील है जिसका निर्माण महाराणा राजसिंह ने कराया था ।

इसके बाद हम चित्तौड़गढ़ पहुँचे, विशालगढ़ जहाँ छः सात पौल (प्रवेश द्वार) से गुजर कर ऊपर पहुँचा जाता है । यहाँ के भोपा (भोपे) प्रसिद्ध हैं, मुख्य व्यक्ति "पाट भोपा" कहलाता है । चित्तौड़ का किला कोई सवा तीन ($3\frac{1}{4}$) मील लम्बा है और आधा मील चौड़ा करीब 600 एकड़ भूमि पर बसा है । अनेक सरोबर और कुंड हैं यहाँ । चित्तौड़ के इतिहास से भी कई घटनाएँ जुड़ी हुई हैं जिनमें 3 प्रसिद्ध हैं, 1- पदमिनी का जौहर,

2- रानी कर्णवती का जौहर, और 3- अकबर का आक्रमण । महाराणा कुँभा का सुप्रसिद्ध विजय स्तंभ । (1433-68) सर्वाधिक चमत्कृत करने वाला अवशेष है । मेवाड़ के अधिकांश किले राणा कुँभा के ही बनवाये हुए हैं, उन्होंने शौर्य और साहित्य का अद्‌भुत मिश्रण प्रस्तुत किया था । रसिक प्रिया और संगीत रत्नाकर पर टीका लिखी थी उन्होंने । यही मीरा मंदिर और कुँभश्याम मंदिर प्रसिद्ध है । जौहर स्थल के पास ही गोमुख कुंड है, जिसमें से लगातार पानी गिरता रहता है । चित्तौड़ में ही भामाशाह की हवेली है । चित्तौड़ी, बुर्ज पर मोहर नगरी को देखा । इस प्रकार चित्तौड़, श्रृंगार, प्रेम, विरह, युद्ध और जय-पराजय के अनेक दिन देख चुका है ।

"तनिक हरि, चितवौजी मोरी और ......" मीराबाई के पद के बहाने गोविन्द मिश्र ने राजस्थान की मेवाड़ भूमि, उदयपुर क्षेत्र, श्रीनाथद्वारा और चित्तौड़ भूमि के इतिहास को हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है ।

4- **शर्मीला सतपुड़ा** -

इस यात्रा वृत्त में मिश्रजी ने गुजरात और महाराष्ट्र की भूमि से परिचय कराया है तथा 3 भागों में इस यात्रा वृत्त को प्रस्तुत किया है, संक्षिप्त वस्तु विवेचना इस प्रकार है -

क- **रंगों की गंध में लिपटी पंचमढ़ी** -

हिमालय, अरावली, नीलगिरि, और विंध्याचल भारत के प्रसिद्ध पर्वत हैं । मध्य प्रदेश, गुजरात और महाराष्ट्र में फैला हुआ सतपुड़ा भी कम प्रसिद्ध और कम महत्वपूर्ण नहीं है। मेरे (मिश्रजी ने) मन में इस क्षेत्र को भी देखने की तीव्र लालसा उत्पन्न हुई थी । पंचमढ़ी इसी पर्वत - श्रृंखला के मध्य बसा एक शहर है ।

भोपाल और होशंगाबाद के बीच बुदनी नामक स्थान पर विन्धयाचल की पर्वतमाला समाप्त होती है और सतपुड़ा पर्वत श्रेणियां शुरू हो जाती हैं । इस स्थान विशेष को रामायण

और महाभारत की विभिन्न घटनाओं से जोड़ा गया है । बुदनी के पास बहता हुआ गड़रिया नाला आगे चलकर नर्मदा नदी में मिल जाता है । नर्मदा नदी मध्य प्रदेश की प्रसिद्ध, खूबसूरत, किन्तु प्रेमिका सी भयानक नदी है । तवा नाम की नदी भी इसमें मिलती है, नाम साधारण लेकिन पाट नर्मदा से भी बड़ा बहाव काफी तेज, जहाँ पुल बनाना ही कठिन है ।

पंचमढ़ी एक छावनी केन्द्र है जहाँ पहुँचने के लिए पिपरिया स्टेशन पहुँचना पड़ता है, यहाँ से मटकुली और वहाँ से पंचमढ़ी । सतपुड़ा के घने जंगलों में सागौन, धावड़ा, बबूल, खैर, पलाश, हल्दू के पेड़ इतनी बड़ी मात्रा में हैं कि पहाड़ ही छिप जाता है । सागौन बहुत मूल्यवान है । आदिवासी इसके पत्तों का छाता बना लेते हैं । रास्ते में 'देनवा' एक पहाड़ी नदी के दर्शन हुए, इसका दृश्य बड़ा ही सुहावना था । पंचमढ़ी रात को पहुँचे, बिजली भी गायब थी और एक सरकारी बंगले में ठहरे । खस्ता हाल डाक बंगला । सवेरा होने पर मन भी बेहद उखड़ा-उखड़ा रहा कि कहाँ आ गए ? आखिरकार "होली डे होम" नामक होटल के प्रबन्धक ने बड़े ही धैर्य के साथ कमरा सं0 20 में हमारे ठहरने का इंतजाम किया । सामान रखकर यमुना प्रपात देखने निकल पड़ा । यही पंचमढ़ी यमुना प्रपात की तस्वीर है । दो झरनों की दोनों धारों की अलग-अलग स्पर्शानुभूति थी । यहाँ भी घने जंगल और ऊँचे-ऊँचे वृक्ष ।

पंचमढ़ी छोटी सी खूबसूरत नगरी है । समुद्र तल से लगभग 1000 मीटर ऊँचाई पर स्थित । छावनी क्षेत्र होने के कारण ही शायद कुछ व्यवस्थित भी हैं । चारों तरफ पहाड़ियाँ । स्वच्छ सड़कें, कहीं नहर, झील, कहीं नदी जैसा झरना, कहीं छितरे हुए पुरइन, कमल और नील कमल के पत्ते । एक किनारे एक बड़ी सी झील, एक बड़ा सा बाग और चर्च । छोटा सा बाजार भी । इस प्रकार यह नगरी स्वप्न नगरी सी लगती है । यहाँ एक फौजी ट्रेनिंग स्कूल भी है । होटल के खाने की बजाय एक अध्यापक बंधु के घरेलू भोजनालय में सस्ते और अच्छे खाना का प्रबंध ढूँढ़ लिया गया । तीसरे दिन हम मैं, बंसी महेश्वरी एवं गणेश शुक्ल मिले । एक दिन रजत प्रपात देखने का अवसर मिला । आदिवासी विभाग के

दो कर्मचारी मित्र साथ थे । पांडव गुफा को देखा, और लगा कि इसी कारण पंचमढ़ी का नाम पड़ा है - पांडव मढ़ी । उस स्थान पर जाकर देखा, जहाँ से रजत प्रपात की सफेदी सी पतली धारा चाँदी की लकीर सी नीचे गिर रही है । चढ़ाव पर रंग-बिरंगे पत्थरों के टुकड़े देखे ।

पंचमढ़ी में काफी बारिश होती है । एक दिन मेरे (मिश्रजी के) लिए खुशी का दिन आया, जब गणेश शुक्ल ने 'तुम्हारी रोशनी में' मेरा उपन्यास पढ़ने को माँग लिया और पढ़कर सराहना की । "लाल-पीली जमीन" उपन्यास की भी उस प्रगतिवादी व्यक्ति ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की । इसके साथ एक दिन जटा शंकर की पहाड़ियों को देखने निकल पड़ा जो कौवों का तीर्थस्थान है जिसकी कथा भस्मासुर के भस्म होने से जुड़ी है । जटा शंकर का मुख्य आकार्षण पहाड़ की दरार में खड़े होकर ऊपर देखना है । वहाँ बहता झरना और अंधेरे में छिपा शिवलिंग दर्शनीय है । अन्य दर्शनीय स्थल हैं बड़े महादेव की पहाड़ी, अप्सरा प्रपात, चौरागढ़ और धूपगढ़ की ऊँची चोटी । पंचमढ़ी के पास ही एक चोटी पर चढ़कर सूर्यास्त का दृश्य देखने में सुन्दर लगता है, यहीं से सतपुड़ा पर्वत श्रृंखला देखने का सुख भी अनुभव किया जाता है । यहाँ का सुखमय और सौन्दर्यमय प्राकृतिक वातावरण असाध्य रोगों के लिए औषध का काम करता है । डा0 राजेन्द्र प्रसाद भी यहाँ स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करने आये थे । "होली डे होम" से पिपरिया वाली सड़क से होते हुए अंबाजी का मंदिर और भोपाल बेगम की कोठी तक पहुँचा जा सकता है । कोठी स्थल से सतपुड़ा पहाड़ियों का विहंगम दृश्य देखा जा सकता है और इस प्रकार पुनः आगमन की अभिलाषा के साथ में खूबसूरत नगरी पंचमढ़ी का भ्रमण कर लौट आया ।

ख- **तामिया में तूफानी रात** -

सतपुड़ा पर्वत श्रृंखला का प्रसिद्ध डाक बंगला है तामिया । यह डाक बंगला छिन्दवाड़ा वाले रास्ते पर पड़ता है । छिन्दवाड़ा जंगलों और पेड़ों के लिए प्रसिद्ध है, तामिया भी खूबसूरत क्षेत्र है । पहाड़ के एक छोर पर स्थित होने के कारण नीचे खूब गहरी खाई,

दोनों तरफ हरे भरे ऊँचे-नीचे पर्वत भी दिखाई देते हैं । यह अच्छा पर्यटन स्थल या दर्शनीय स्थल है जहाँ दिन भर लोगों के झुँड नजारा लेने आते हैं और दिन भर यह डाक बंगला पर्यटक रेस्तरां बना रहता है । हम यहाँ कुर्सी पर बरामदे में बैठे बर्षा का आनन्द ले रहे थे, किन्तु बिजली के चले जाने से सारा मजा किरकिरा लगने लगा और हम बी0डी0ओ0 साहब के यहां खाना खाने हेतु चल दिए, जहाँ एक-दो लालटेन का ही प्रकाश हो रहा था । देखते ही देखते बरसात ने तूफान का रूप ले लिया था और उस तूफानी रात में सुन्दर दृश्य भयानक लगने लगा । सबेरे भी वर्षा पातालकोट जाने की कोई आशा ही नहीं रही । आखिरकार हम पिपरिया और बम्बई के मध्य चलने वाली बस के बराबर से गुजरते हुए जीप दुर्घटना हुई, ईश्वर की कृपा से हम बच गए ।

तत्पश्चात् हम नर्मदा के आस-पास बरगी नगर में वत्सलनिधि के लेखक शिविर में कविवर अज्ञेय जी से मिले । शाम को एक कवि सम्मेलन में जाने की इच्छा, कि नर्मदा में हाथ मुँह धोने और पानी पीने की इच्छा से फिर दुर्घटना का शिकार हुआ कि फिसलकर कमर तक नर्मदा के पानी में जा गिरा खैर मित्रों की तत्परता से फिर बचा लिया गया । "बलबती केवलमीश्वरेच्छा" ।

ग- गुफाएँ, धूपगढ़ और महादेव -

पर्यटन स्थल मनुष्य को बार-बार अपनी ओर खींचते हैं, दर्शनीय स्थलों को देखने का बार-बार जी करता है चाहे वह स्थल नैनीताल, बद्रीनाथ या कश्मीर हो या रामेश्वर कन्याकुमारी या पंचमढ़ी ही क्यों न हो । मिश्रजी ने पंचमढ़ी जाने का दुबारा कार्यक्रम बनाया । पूर्ववत् "होली डे होम" होटल में छत्तीस (36) नम्बर कमरा और मनोज भोजनालय में खाने का प्रबन्ध । गणेश शुक्ल का ही फिर साथ मिला । रजत प्रपात से पंचमढ़ी का मार्ग पगडंडी वाला है जहाँ प्रागैतिहासिक कालीन कला कृतियाँ देखी जा सकती हैं । विंध्याचल और सतपुड़ा की श्रेणियाँ मुलायम रेतीले पत्थर की हैं । भीम बैठका की खुदाई ने सिद्ध कर दिया

है कि यहाँ पाषाण युगीन व्यक्ति रहता रहा है । ऐसे ही स्थलों की गुफाओं के भीतर चटटानों पर कलाकृतियां मिलती हैं, जो सफेद हैं । चट्टान के काले रंग पर सफेद रंग अच्छा उभरता है । सफेद के अलावा कहीं लाल और बादामी रंग भी हैं । अधिकतर आकृतियाँ धनुषबाणधारी आदमियों की हैं, साथ में कटार, भाला आदि हथियार भी हैं । ये आकृतियां शिकार या युद्ध से सम्बन्धित हैं । कहीं-कहीं नर्तकियों के भी चित्र हैं । कलाकृतियों वाले ये चट्टानी घर पंचमढ़ी में यत्र तत्र बिखरे हुए हैं । अप्सरा प्रपात वाले मार्ग में धुँआधार नामक चट्टानी घर है एकाध भोपाल बेगम महल से आगे और महादेव पहाड़ी के आस-पास भी हैं ।

कला, व्यक्ति की स्वयं को व्यक्त करने की आकांक्षा है, इसीलिए मनुष्य कला प्रेमी है । इस बार धूपगढ़ और महादेव भ्रमण की योजना बनाई गई । धूपगढ़ सतपुड़ा की सबसे ऊँची चोटी है, धूप से आच्छादित रहने के कारण ही शायद इसका नाम पड़ा है । पर्यटक यहाँ सूर्यास्त कालीन दृश्य देखने आते हैं । पंचमढ़ी से जीपें जाती हैं, मार्ग में नीली पानी वाली झील का दृश्य लुभावना लगता है । यहाँ सूर्यास्त का दर्शन ही आकर्षक माना जाता है । लेकिन लेखक को कोई आकर्षण दिखाई नहीं दिया । एक दिन महादेव भी गए, जैन दादा, गणेश भाई, जगदीश साथ में थे । महादेव चोटी पर शिवजी का मंदिर है जहाँ शिव भक्त त्रिशूल गाड़ते जाते हैं । शिवरात्रि को यहाँ मेला भी लगता है । मंदिर के सामने गुफा में एक कुंड है, जिसमें वहां आकर भक्त लोग गीले वदन शिवलिंग पर जल चढ़ाते हैं । एक के पार एक टीले पर गक्कड़, एक विशेष आहार जो उपलों की आग में आलू और बैंगन भूनकर आटे में मिलाकर फिर सेका जाता है । और घी में डुबोकर शक्कर के साथ मिलाकर खाया जाता है , बनाया गया । तत्पश्चात् चट्टान पर कलाकृतियों की एक अज्ञात गुफा को देखने गए । पर गुफा नहीं मिली । आखिरकार हम पंचमढ़ी चल दिए, देखा कि गरीब घर की औरतें लकड़ी का बोझ उठाये पैदल ही पंचमढ़ी बेचने जा रही हैं, जबकि हम थकान महसूस कर रहे थे । पंचमढ़ी पहुँचते-पहुँचते पैर दर्द करने लगे थे । यहीं की ठुन्नूलाल वैद्यजी

से मुलाकात हो गई थी, मधुर वार्तालाप हुआ, मधुपान के साथ जलपान हुआ । और इस प्रकार यह धूपगढ़ और महादेव की यात्रा भी पूरी हुई ।

5- **पेरियार के साथ-साथ** -

इस यात्रा वृत्त में केरल प्रान्त की यात्रा और वहाँ के मुख्य पर्यटन और दर्शनीय स्थल से परिचय कराते हुए लेखक ने पेरियार नदी के विस्तार का भी उल्लेख किया है ।

त्रिवेन्द्रम बम्बई रेलमार्ग पर केरल के प्रसिद्ध बैंक वाटर्स के सौन्दर्य से आकर्षित चित्त वाले मिश्र जी के मन में केरल घूमने का विचार उत्पन्न हुआ । एर्णाकुलम स्टेशन, शहर और बाहर के गाँवों को देखा । भूमि उपयोग, शिक्षा और स्वच्छता की दृष्टि से केरल भारत में सबसे आगे है । स्वर्णाकुलम का प्रथम बड़ा सा पुल शहर को एक द्वीप से जोड़ता है और दूसरा पुल द्वीप से कोचीन की मुख्य भूमि पर ले जाता है । यह द्वीप है बैलिंगडन । यहाँ अधिकतर कार्यालय ही हैं और मलाबार नाम का बड़ा सा होटल भी है यहाँ इस बार मिश्रजी समुद्र तट पर स्थित एक गैस्ट हाउस में ठहरे । कोचीन का वातावरण एर्नाकुलम से एकदम भिन्न । गैस्ट हाउस क्षेत्र भी कोचीन का पुराना इलाका है । गैस्ट हाउस की इमारत करीब सौ वर्ष पुरानी होगी । इसी के पास समुद्र के किनारे बँधी बड़ी-बड़ी नौवी जैसे मछली पकड़ने के जाल । इस प्रकार मत्स्य पालन उद्योग काफी बड़े पैमाने पर चलता है यहाँ । पास में ही सन् 1779 में बनी सेंट फ्रांसिस चर्च है । कहते हैं 1524 में यहाँ वास्कोडिगामा की कब्र थी, जो एक बहादुर साहसी पुर्तगाली नाविक था, जिसने भारत की खोज की थी । गैस्ट हाउस की बगल में ही चाहरदीवारी पर लिखा है - "डच सिमैट्री 172।" । वैलिंगडन द्वीप के सामने कोचीन भूखंड पर डच पैलेस या मटनचैरी पैलेस है जिसे पुर्तगालियों ने बनवाकर 1555 में कोचीन के राजा को भेंट कर दिया था । 1663 में इसका नाम डच पैलेस रखा गया । मलावार समुद्र तट युद्ध का केन्द्र रहा है । चाय, इलायची, कॉफी, रबर, काली मिर्च की खेती होती है यहाँ ।

डच पैलेस के एक बोर्ड में वर्मा राजाओं की वंशावली भी टंगी हुई है, इनमें मार्तण्डवर्मा और रामवर्मा प्रतापी राजा थे । पैलेस के बाहर एक गोल छोटा सा विष्णु मंदिर भी है । कोचीन का प्राकृतिक बन्दरगाह बनाने में यहाँ की प्रसिद्ध नदी पेरियार का बड़ा महत्व है । भगवान परशुराम और समुद्र से जुड़ी कथा भी प्रसिद्ध है । दोपहर बाद गुरूवायोर मंदिर जाते हुए कलाड़ी स्थान पड़ा, जो आदि शंकराचार्य का जन्म स्थान है, यहाँ भी पेरियार नदी की पहली सी धारा इस क्षेत्र को भव्यता और पवित्रता प्रदान कर रही है । करीब सात बजे गुरूवायोर मंदिर पहुँचे । यहाँ भगवान विष्णु का वही विग्रह प्रतिष्ठापित है जो ब्रह्माजी और कश्यप मुनि के माध्यम से प्राप्त हुआ था । श्रीकृष्ण ने उद्धव से द्वारका जाते समय गुरू (बृहस्पति) और वायु की सहायता से इस मंदिर को बनाने हेतु कहा था । इसलिए इस मंदिर का नाम रखा गया है गुरूवायोर । लौटते समय त्रिचूर शहर के मध्य स्थित शिव मंदिर देखा। नौवीं-दसवीं सदी के इस मंदिर में भव्य कलाकृतियाँ भी हैं जो पत्थरों पर बनी हुई हैं । कौचीन लौटने पर राय साहब और उसके सहायक ने हमारा अच्छा स्वागत किया था । राय साहब बिहार में अपना परिवार छोड़कर यहाँ अकेले नौकरी के लिए पड़े हुए हैं । यहीं जोशी परिवार से भी मेल बढ़ा और शीघ्र ही पारिवारिक वातावरण बन गया ।

अगले दिन कोचीन से करीब 130 किमी0 दूर मुन्नार देखने गए, जो केरल का एक हिल स्टेशन है, बड़ा ही खूबसूरत । नारियल और केलो के वृक्षों से ढकी पहाड़ियों के बीच स्थित है मुन्नार । इसी मार्ग के बीच में एक दो स्थानों पर पेरियार नदी के फिर दर्शन हुए। पेरियार केरल की महत्वपूर्ण नदी है । काली मिर्च और चाय की खेती होती है यहाँ मुन्नार छोटी सी सुन्दर बस्ती है जो पल्लास नाम की छोटी सी नदी के तट पर स्थित है । अगले दिन बड़े सबेरे ही एक चिड़िया जैसी आवाज सुनकर मैं कमरे से बाहर निकल कर चल पड़ा और मैं काफी दूर कोहरा प्रसिद्ध है और आज सचमुच अनुभव भी किया । इसके बाद हम तेकड़ी में पेरियार लेक देखने जा निकले । वह झील क्या, समुद्र का ही एक हिस्सा लगती है । झील के उधर अन्य द्वीपों में जानवर हैं तथा एक द्वीप में चार सिताए (फौर स्टार)

होटल भी है । पेरियार लेक में चक्कर लगाते - लगाते हाथियों का झुंड भी दिखाई दिया । रोकड़ी में पर्यटन विभाग द्वारा निर्मित स्थल खूबसूरत है । ये भी घने वृक्षों के नीचे, पेरियार लेक के किनारे पर । यहाँ कुछ विदेशी पर्यटक भी मिले । टूरिस्ट बंगलों के कर्मचारी सिर्फ मामूली सी अंग्रेजी ही जानकर काम चलाते हैं । चंगनचेरी से अलप्पी के रास्ते में ही बैंक वाटर्स शुरू हो जाता है । यहाँ पर एक छोटी नाव (वल्लम) में बैठकर सैर भी की । शाम को समुद्र तट पर पहुँचा और प्रिंस होटल में ठहरे । तभी सभी पर्यटकों का एक दल वहाँ आ गया । गर्मजोशी के साथ होटल कर्मचारियों ने उनका स्वागत किया और रात को पार्टी हुई ।

अगले दिन सबेरे सड़क पार की बस्ती में नारियल के सामान बनाने वाले एक छोटे से कारखाने को देखा । नाश्ता के बाद होटल छोड़कर अलप्पी के बैंक वाटर्स की सैर पर निकल पड़े और मोटर वोट से समुद्र में सैर की । छोटे छोटे समुद्री रास्तों से होते हुए वेमानद कामल नाम्बी बड़ी झील में जा पहुँचे, फिर कइनाकरी के मार्ग से आगे बढ़े । इसके बाद कुमरकम खूबसूरत जगह पर पहुँचे । यहाँ का प्राकृतिक सौन्दर्य दर्शनीय है । इसी के एक छोर पर सैंट पीटर्स चर्च है - सफेद इमारत । समुद्र में पड़ी घास को काटती हुई मोटरवोट कुमरकम टूरिस्ट स्पाट में लंच के लिए रूकी । पुरानी इमारत में बने होटल के ठीक सामने एक छोटी सी झील है, फिर हम पुन्नमूड़ कायल की ओर होते होते वापस आ गए । हमारा अंतिम पड़ाव चावरा था । यहाँ नारियल की डोर बनाने का काम होता है । यहीं समुद्र तट पर ताड़ के पत्तों से बनी झोंपड़ी में रात बिताने को मन् हुआ । सबेरे ही चावरा समुद्र तट पर निकल गया और मछली पकड़ते हुए मछुआरों की नाकों की ओर देखता रहा । इस समुद्र तट पर जीवन बड़ा ही जीवंत लगा ।

इस प्रकार मैंने (मिश्र ने) काफी घूम फिर कर समीपता से केरल को देखा । पेरियार के साथ - साथ ।

6- पूर्वांचल में प्रकृति -

यह यात्रा वृत्त मिश्र जी की पूर्वांचल की यात्रा का वृतान्त है, जिसके अन्तर्गत उन्होंने पूर्वोत्तर राज्यों मणिपुर, असम, अरूणाचल, नागालैंड आदि की यात्रा की और उन्हें निकटता से देखने का प्रयत्न किया ।

1970 में असम की प्रथम बार यात्रा करने के बाद उनकी दूसरी यात्रा 1987 में मणिपुर विश्वविद्यालय में आयोजित उपन्यास संगोष्ठी के आगमन से प्रारम्भ होती है । इस बार उन्होंने समस्त पूर्वांचल की प्रकृति को देखने का मन बनाया । साथ में पत्नी और पुत्री मनु भी थी । हवाई जहाज द्वारा बंगला देश को पार कर हम गोहाटी - गुआहटी पहुँचे। गुआहटी का शाब्दिक अर्थ है सुपाड़ी का बाजार । वहाँ रूकने का कार्यक्रम न होने के कारण सीधे शिलोंग पहुँचे । जोरवाट से बायीं ओर का रास्ता असम और दायीं ओर का मेघालय को जाता है । यहां गोरा खासी - जयन्तिया की पहाड़ियां साथ - साथ चलती हैं । शिलांग में हम वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक झाजी के यहाँ रूके । पहले की अपेक्षा आज शिलोंग शहर का विस्तार हो चुका है । पूर्व में कभी इसे "ईस्ट का स्काटलैंड" कहा जाता था, किन्तु आज तो यह सरकारी अधिकारियों, मुख्य मंत्री और मंत्रियों का आवास स्थल बना हुआ है । हिल स्टेशन आज हाईवे बना हुआ है । शहर के बीचों-बीच एक वार्ड लेक बोटेनिकल गार्डन में बनाई गई है जो पर्यटन स्थल है, खूबसूरत पिकनिक स्पाट । यहाँ के बाजारों में रंग बिरंगी पोशाकों वाले ग्रामीण स्त्री पुरूष व बच्चे दिखाई देते हैं । शिलांग में कई झरने हैं । जिन्हें विशप, मारगेरट, विओडोन, स्वीट ईगल, एलीफेंटा आदि नाम दिए गए हैं । वहीं से शिलोंग शिखर को देखा, बादलों का सुन्दर घेरा और दृश्य देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई ।

दूसरे दिन चेरापूंजी गए जो विश्व में सर्वाधिक वर्षा का केन्द्र है । यहाँ ऊँचाई से गिरते कई झरने हैं, जिनकी पतली धारा बरसात में अच्छी लगती है । तत्पश्चात् भारत के विख्यात नेशनल पार्क काजीरंगा के दृश्य का आनन्द लिया । यह पार्क गुवाहाटी डिब्रूगढ़ रोड

के बीच में स्थित है । रात को वहाँ विश्राम करने के बाद सुबह ही चिड़ियों की संगीत भरी आवाजें सुनाई दीं । पीछे एक छोटी सी नदी पहाड़ियों के बीच से बह रही थी । एक पहाड़ी पर कॉफ के पौधे तो दूसरी पर गणेश मंदिर । फिर काजीरंगा पार्क को ही घूम-घूम कर देखा । गैंडा, हाथी और भैंसे जैसे जानवर अच्छे लग रहे थे । काजीरंगा डिब्रूगढ़ मार्ग पर जोरहट का सैनिक केन्द्र और शिव सागर शहर को देखा जो किसी समय में एक शक्तिशाली साम्राज्य की राजधानी थी, अब तो यहाँ अवशेष ही बिखरे दिखाई देते हैं । शिव सागर करीब 130 एकड़ में फैला हुआ दो सौ वर्ष पुराना विशाल सरोवर है, शिव को समर्पित यह सरोवर नगर के बीचों बीच है । सरोवर के किनारें पर स्थित शिवदोल, विष्णु दोल (जौयदोल) और देवी दोल नामक तीनों मंदिर राजा शिवसिंह की पत्नी महारानी मदांबिका ने 1734 में बनवाये थे थोड़ी ही दूरी पर जौयसागर, गौरी सागर और रूद्रसागर तालाब भी हैं । यहीं पर करेंगघर, तलातलघर और रंग घर भी हैं जो राजमहल के हिस्से हैं । गरगांवपहल सतमंजिली लाल इमारत है जिसे 1548 के बाद 1762 में राजा राजेश्वर सिंह ने बनवाया था । आज यहाँ गाय बकरियों को चरते हुए भी देखा जा सकता है ।

डिब्रूगढ़ भारत के छोटे शहर जैसा है, यहाँ चारों ओर चाय के बागान हैं और अब तो तेल (खनिज) उत्पादन का केन्द्र भी है । शाम होते होते ब्रह्मपुत्र नदी पर पहुँचे । यहीं मित्र झा ने आप बीती एक घटना सुनाई । अगले दिन अरूणाचल प्रदेश में खम्भा के लिए निकल पड़े । अरूणाचल घने जंगलों, हरियाली के लिए तो प्रसिद्ध है ही भारत में सर्वप्रथम सूर्यास्त के लिए भी विख्यात है । राज्य की सीमा पर प्रवेश पत्र बनवाकर शाम तक खम्भा जा पहुँचे और सर्किट हाउस के कमरा नं0 1 में ठहरने का प्रबन्ध हुआ । खम्सा नीचे फैला छोटा सा खूबसूरत कस्बा है हिल स्टेशन जैसा । मुहाने पर रामकृष्ण मिशन और बीच में जंगली झरना मोटा । पैदल घूम कर ही सारे शहर का आनन्द उठाया । वहाँ से सिर्फ 35 किमी0 दूर रह जाती है वर्मा की सीमा ।

इस क्षेत्र में गरीब आदिवासियों की झोपड़ियां देखने को मिली । झरने को पार कर इधर की सड़क पर आ गए और शहर के बीचों बीच जन जातियों के पूजा स्थल को भी देखा और शाम को लौटकर जिलाधिकारी (कलक्टर) महोदय के यहाँ जलपान हुआ ।

चारों ओर से पहाड़ियों से घिरे खम्सा में सूर्योदय का पता लगाना कठिन होता है कि किधर से सूर्योदय हो रहा है । इस तरह पूरे 24 घंटे (एक दिन) खम्सा में बिताया और अगले दिन तिनसुखिया होते हुए अरूणाचल के नामसाइ देखने गए, रास्ते में दिहांग नदी का तेज बहाव अच्छा लग रहा था । नामसाइ भी इसी नदी के तट पर बसा हुआ छोटा से कस्बे जैसा गांव ही है । दोपहर बाद पास की आदिवासी बस्ती में भी गए जहाँ बौद्धानुयायी छोटे खम्भों पर बनी झोंपड़ी वाले घर में रहते हैं । एकदम आधुनिक सुख-सुविधाओं से अछूती बस्ती । रात को नामसाइ के गैस्ट हाउस में ठहरना हुआ । अगले सुबह वहाँ के घने जंगलों को देखा पहले जीप द्वारा फिर वन विभाग के एक ट्रक से जाना पड़ा । बड़े-बड़े लट्ठों को कीचड़ से बाहर खींचते हुए हाथियों को देखा । यही खून चूस कर फूल जाने वाले कीड़े लीच से भी पाला पड़ा । पुनः अपराह्न 2 बजे डिब्रूगढ़ को देखने पहुँचे । इस प्रकार भूटान, चीन और वर्मा की सीमाओं को छूने वाले अरूणाचल प्रदेश का भ्रमण किया ।

एक दिन फिर शैवों, वैष्णवों, तांत्रिकों और ज्योतिष प्रेमियों को आकर्षित करने वाले शहर गुआहाटी लौटकर इम्फाल को गए । यहाँ ब्रह्मपुत्र नदी के पीकौक पर उमानन्द का मंदिर और नीलांचल पर स्थित कामाख्या मंदिर प्रसिद्ध तीर्थ स्थल हैं । और इस प्रकार मणिपुर प्रान्त की झलकती छटा को देखने का अवसर मिला । यहाँ कूकी और नागा जन जातियों ने ईसाई धर्म अपना लिया है । यहाँ की सड़कों पर साइकिल चलाती हुई सुन्दर लड़कियों को देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई । अगले दिन सुबह इम्फाल का बाजार देखा फिर जहाँ क्रेता और विक्रेता सिर्फ औरतें ही थीं । यह बाजार रब्बैरामबंद था जिसे बोलचाल की भाषा में "एन्नीमार्केट" कहा जाता है ।

बस, इसके बाद विश्वविद्यालय के कार्यक्रम में भाग लेना अनिवार्य हो गया और काँचीपुरम्, इम्फाल से 14-15 किमी0 दूरी पर विश्वविद्यालय परिसर है । फिर भी एक दिन आयोजकों से अनुमति लेकर इम्फाल नदी से जुड़ी ताजा पानी की झील लोकटक का दृश्य देखने निकल गया । यह झील समुद्र तल से 68 मीटर की ऊँचाई पर 25 वर्ग मील में फैली सबसे बड़ी झील है । झील का दृश्य बड़ा ही सुहावना लगा । ऊपर सेंटा द्वीप पर टूरिस्ट हाउस है । जहाँ पिकनिक मनाने आने वाले झील का सुन्दर दृश्य देखकर खुश होते हैं ।

झील के एक छोर पर नाइरंग नेशनल पार्क है जहाँ संगाई जाति के हिरण रहते हैं। फिर मोइरंग कस्बा में गए जहाँ नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने 12 अप्रैल 1944 को तिरंगा फहराया था । यहीं पर दो पुराने साथी मिले जिनमें एक पुलिस में और एक आई0 ए0 एस0 अफसर है । दूसरे अफसर साथी वसु को साथ लेकर अन्य दृश्य देखे तथा मोटे नामक हँसमुख और बातूनी सज्जन से भी परिचय हुआ । इस प्रकार विश्वविद्यालय की संगोष्ठी में भाग लेते हुए इम्फाल में घूम लिया और तत्पश्चात् एक दिन नागालैंड की राजधानी "कोहिमा" को भी घूमकर देखा, वह भी एक सुन्दर हिल स्टेशन है । रात को सर्किट हाउस में ठहरना हुआ और अगले दिन कब्रगाह सिमेट्री को देखा जो कोहिमा शहर की एक ऊपरी पहाड़ी पर है । सीढ़ियां शिल्पयुक्त हैं, कब्रों में लगी एक प्लेट पर लिखा था - "टु गौड दे बिलोंग्ड" । यहीं पर जापानियों के आक्रमण को विफल कर दिया गया था ।

"कोहिमा" गांव जिसे "बड़ी बस्ती" कहते हैं, आकार में एक बड़ा गांव भी है जहां नागा गांवों में प्रवेश कर पारम्परिक द्वार "बड़ा दरवाजा" है । यहां भी कोहिमा के बाजार से गुजरते हुए म्यूजियम को देखा जहां नागाओं की अलग-अलग जीवन-शैली के चित्र अंकित हैं । इस प्रकार अनुभव किया कि नागालैंड बाहर और भीतर दोनों तरफ से रहस्यपूर्ण प्रदेश है ।

और इस प्रकार पूर्वांचल प्रान्तों की यात्रा पर वापस कलकत्ता और वहाँ में बम्बई आ गया । यह सिद्ध होता है कि पूर्वांचल का भूखंड कलकत्ता-बम्बई के खडखड़ भूखंड से कहीं

अधिक अच्छा है, खूबसूरत है और शान्त भी है । यह विचित्रता मानो मुझे (मिश्र को) पुनः बुलाती है ।

इस प्रकार देश-विदेश की यात्रा का यह मनमोहक वृतान्त पाठक को घर बैठे ही दुनियाँ की सैर करा देने वाला प्रतीत होता है । पढ़ते समय ऐसा लगता है मानो पाठक स्वयं उन दृश्यों का आनन्द ले रहा हो ।

उपलब्धियाँ -

गोविन्द मिश्र मूल रूप में कहानीकार और उपन्यासकार हैं । कथाकार तो ऐसे हैं जो व्यक्ति के अन्तर्गत एवं बाह्य समाज के बहुस्तरीय पारस्परिक सम्बन्ध को उद्घाटित करना चाहते हैं, किन्तु पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति में हो रहे मानवीय जीवन मूल्यों के उत्तरोत्तर विघटन और अवमूल्यन के विषय में व्यक्त उनके विचार किसी सांस्कृतिक पूर्वाग्रह से प्रेरित साधारणीकरण नहीं है । ये विचार तो वास्तविक मानवीय स्थितियों के मर्मस्पर्शी अनुभवों पर आधारित हैं ।

"धुँध भरी सुर्खी" यात्रा वृत्त के विषय में श्री सुधीर चन्द्र ने लिखा है - "गोविन्द मिश्र ने आधुनिकीकरण की तार्किक परिणति को देखा ही है, साथ ही साथ उस विघटन को भी देखा है जो ब्रिटेन में आर्थिक कठिनाइयों, रंगभेद और राष्ट्रीयता की समस्याओं के फलस्वरूप हो रहा है । स्वाभाविक ही है कि इस विघटन के सन्दर्भ में उनकी सहानुभूति इंग्लैण्ड के साथ न होकर स्कॉटलैण्ड और वेल्स के साथ है । भाषा, साहित्य और संस्कृति के सहारे इन क्षेत्रों में स्थानीय राष्ट्रीयता का जो पुनरूत्थान हो रहा है, उसका भविष्य कितना ही अनिश्चित क्यों न हो, उसकी बढ़ती हुई शक्ति को नकारा नहीं जा सकता ।"[1]

1- नाना मूड़ों और भावों के बीच पनपता एक अनुभव (समीक्षात्मक निबंध) सुधीर चन्द्र (गोविन्द मिश्र -सृजन के आयाम) पृ0 313-314.

इस यात्रा वृत्त की उपलब्धियों मुख्यतः विशेषताओं का उल्लेख करते हुए उन्होंने पुनः आगे लिखा है -

"धुँध भरी सुर्खी" का सबसे आकर्षक और सफल हिस्सा वेल्स से सम्बन्धित है । आश्चर्य होता । यदि ऐसा न होता । वैसे ऐसा भी नहीं है कि गोविन्द मिश्र को विविध रंगों से ग्रस्त इंग्लैण्ड में कोई अच्छाई है नजर न आयी हो । अफसर शाही से जीविका कमाने वाले गोविन्द मिश्र इंग्लैण्ड और भारत की अपनी बिरादरी की तुलना करते हुए लिखते हैं "ब्रिटेन में किसी कर्मचारी या अधिकारी की होशियारी से पैसा बनाने की लत नहीं है - उन्हें पैसा चाहिए तो वे मांग लेंगे - टिप्स या किसी और जरिए से । लेकिन हिन्दुस्तानी हर काम को इस तरह से ऐंठना चाहता है जिससे कि कुछ पैसे चू पड़ें । अगर यह नहीं तो कम से कम उसकी अपनी महत्ता ही स्थापित हो जाये । यहाँ का कर्मचारी सेवक है, जबकि हिन्दुस्तान का कर्मचारी मालिक । सबसे बड़ा मजाक यह कि दफतरों का सिस्टम इंग्लैण्ड की ही विरासत है ।[1]

श्री राकेश जैन ने भी पुस्तक की प्रस्तुति की विशेषता बताते हुए लिखा है - "पुस्तक की प्रस्तुति में यही विशेषता है कि उसमें कथा-तत्वों की भरमार है - फिर यह जानकारी होने पर कि यह सामग्री काल्पनिक नहीं अपितु वास्तविक है तो उसको महसूसने सबब और भी तीव्र हो जाता है ।"[2]

उन्होंने पुनः आगे लिखा है - मोटे तौर पर मूल्यांकन किया जाये तो पुस्तक की विशेषता है - सामयिक स्तर पर दो संस्कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन । ऐसा लगता है, लेखक अपने सत्य भारतीय संस्कारों की तस्वीर लेकर उन्हें विदेशियों से मिलाता रहा है ।

1- नाना मूड़ों और भावों के बीच पनपता एक अनुभव (समीक्षात्मक निबंध) सुधीर चन्द्र (गोविन्द मिश्र - सृजन के आयाम) पृ0 169-170.

2- "धुँध भरी सुर्खी" राकेश जैन - गोविन्द मिश्र - सृजन के आयाम - पृ0 315.

जहाँ कहीं भी लेखक को कोई विदेशी अनुभव या व्यक्ति मिला, वह झट उसके समान्तर भारत की स्थिति की बात सोचने लगा । यह एक बाल - सुलभ सहज प्रवृत्ति है जो गम्भीर एवं बौद्धिक मामलों में भी लुभावनी लगती हैं ।"[1]

श्री बलराम भाई ने भी "धुँध भरी सुर्खी" को रोचक यात्रा वृतान्त बताते हुए कहा है - "धुँध भरी सुर्खी", गोविन्द मिश्र की यूरोप यात्रा का रोचक वृत्तांत है, जिसमें हिन्दुस्तानी और अंग्रेजी कार्यों को तुलनात्मक ढंग से समझने की कोशिश की गई है ।[2]

यही नहीं "धुँध भरी सुर्खी" और "दरख्तों के पार......शाम" नामक दोनों यात्रा वृत्तों में मिश्र जी ने बहुत कुछ विदेशी अनुभवों, सांस्कृतिक आर्थिक भिन्नताओं और विश्व स्तर पर उभरती समस्यायों से भी पाठकों को अवगत कराना चाहा है । दोनों यात्रा वृत्त विदेशी यात्रा पर लिखे जाने के कारण देखा जाता है कि वहाँ सम्मोहन, आश्चर्य, आनन्द, करूणा, क्रोध, वितृष्णा आदि के बीच निरन्तर स्थापित होते हुए सम्बन्धों का वैविध्य अतीत और वर्तमान के जटिल अन्तर्सम्बन्धों को उद्घाटित करता चलता है । ऐसे अन्तर्सम्बन्ध जो ऐतिहासिक विरासत के रूप में हमारे मानस को हमारे अवचेतन की अनिवार्यतः प्रभावित करते रहे हैं । इच्छा कामना होने पर भी इनसे मुक्ति नहीं मिल पाती, मिलती है तो केवल उस अंश में, सम्भवतः जिस अंश में हम इस प्रभाव के स्वरूप को पहचान पाते हैं । इस पहचान में अपने को हटाकर देखना बहुत सहायक हो सकता है, किन्तु यह आवश्यक नहीं कि अपने से हटकर अपनी पहचान हो जाये । विशेष रूप से तब जबकि मानसिक स्वायत्ता का प्रश्न तथाकथित देशों में व्याप्त विकसित देशों के प्रति मोह से जुड़ा हो । यह मोह अब मात्र मोह न रहकर एक सशक्त मिथक का रूप ले चुका है । "धुँध भरी सुर्खी" का महत्त्व इस बात में है कि इस मिथक से मुक्ति की प्रक्रिया का बड़ा ही सहज वर्णन भारतीय अफसरशाही और साहित्य के एक संवेदनशील प्रतिनिधि ने अपने नाना अनुभवों के आधार पर इस पुस्तक में किया है ।

1- "धुँध भरी सुर्खी" राकेश जैन - गोविन्द मिश्र - सृजन के आयाम - पृ0 316.

2- दो कौमों को समझने की एक बौद्धिक कोशिश - बलराम - पृ0 317.

श्री सुधीर चन्द्र जी ने "विकास" और "आधुनिकीकरण" के मिथक के सम्बन्ध में अपनी भावना व्यक्त करते हुए लिखा है -

सम्भव है कि "विकास" और "आधुनिकीकरण" के मिथक से टक्कर लेना इतिहास की दौड़ में जान-बूझकर असफलता का वरण करना हो । पर यदि मानव गरिमा के साथ जीना चाहते हैं - शायद यदि वह मात्र जीना ही चाहता है - तो इस मिथक के विकल्प को साकार करना ही पड़ेगा । ऐसे विकल्प में ही आदमी की आशा निहित है चाहे वह विकल्प "रोमाण्टिक" ही क्यों न लगे ।"[1]

पाश्चात्य प्रवास विशेषकर इंग्लैण्ड जर्मनी पर अनेक लेखकों ने बहुत कुछ लिखा है, तथापि भारत और इंग्लैण्ड (ब्रिटेन) के मध्य तो ऐतिहासिक - श्रृंखला स्थापित हुई है, वह भी सरलता से नहीं टूटती, फलस्वरूप आज भी भारतीयों और अंग्रेजों के मध्य एक पारस्परिक आभिजात्य दृष्टिगत होता है । परिणामतः गोविन्द मिश्र भी इस पूर्वाग्रह से मुक्त दिखाई देते हैं, तथापि उन्होंने अपनी ही पैनी, सूक्ष्म और तीव्र दृष्टि से विदेश को देखा-परखा है और अनुभव भी किए हैं । अपने तीन माह के पश्चिम प्रवास के दौरान उन्होंने जो अनुभव किए, उन्हें बड़ी ही सफाई और संवेदना के साथ इस पुस्तक में एकत्र किया है । यह भी सत्य है कि गोविन्द मिश्र का सामना अंग्रेज जैसी जबर्दस्त कोमों से भी हुआ और उन्होंने अत्यन्त सतर्कता के साथ एवं कुशलता से यह सामना किया भी, परन्तु सम्भवतः अपनी ही किसी अशक्तता या त्रुटि के कारण पूरी पुस्तक में यह एक अनावश्यक बौद्धिक व्यायाम ही करते दिखाई देते हैं । अंग्रेज अपने व्यक्तिगत मामलों में तो जरूर ही बनिया दिखता है, किन्तु जहाँ दूसरों के मामलों या सार्वजनिक मामलों की बात होती है, वह बड़ा ही निस्संग रवैया अपना लेता है । जबकि हिन्दुस्तानी की निस्संगता और दार्शनिकता सिर्फ अपने मामलों के लेकर ही है । जब दूसरों के या सार्वजनिक मामलों की बात आती है, तब वह अत्यन्त ही कृपण बन जाता है ।

1- जाना मूड़ों और भावों के बीच पनपता एक अनुभव - निबन्ध - सुधीर चन्द्र, पृ0 313.

"धुँध भरी सुर्खी" के माध्यम से लेखक ने देश और विदेशगत अनेक समस्यायों को भी उभारने की चेष्टा की है, कतिपय समस्याएँ इस प्रकर प्रस्तुत की जा सकती हैं -

1- **एक रोचक वृतान्त -**

"धुँध भरी सुर्खी" मिश्रजी का यूरोप यात्रा पर लिखा गया एक रोचक वृत्तांत है । दिल्ली के हवाई अड्डे पालम से लेकर, तेहरान होते हुए लन्दन के हीथरो हवाई अड्डे तक ही यात्रा और बीच के प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन बड़ा ही अच्छा लगता है । लन्दन के प्रसिद्ध स्थलों का आँखों देखा वर्णन, उनके सुसम्बद्ध स्वरूप का उल्लेख, वेल्स, फ्रान्स, जर्मनी की यात्रा, रेल द्वारा, जहाज द्वारा, बस द्वारा सभी का सुन्दर शैली में यथार्थ वर्णन प्रस्तुत किया गया है । पाठक को ऐसा लगने लगता है कि सचमुच वह स्वयं इन स्थानों की यात्रा पर निकला हो ।

2- **दो जातियों को समझने की चेष्टा -**

यह तो सत्य ही है कि यह यात्रा के दौरान गोविन्द मिश्र का सामना अंग्रेजों जैसी शक्तिशाली जाति से हुआ था । इस सन्दर्भ में उन्होंने लिखा भी है - "दरअसल अंग्रेज जितना धैर्य रख सकता है, उतना आम हिन्दुस्तानी के बूते की बात नहीं, इसीलिए वह हमारे लिए और हम उसके लिए कष्ट का कारण थे । × × × तब जरूर यह लग रहा था कि उसकी वेरूखी थी, लेकिन कुछ ही दिनों लन्दन में रहकर मैंने महसूस किया कि दो विपरीत स्वभावों वाली कौमों में साथ काम करने की स्थिति में जो एक अपरिचय की सी स्थिति बन जाती है, यह वही थी ।"[1]

कुछ अन्य स्थलों पर भी मिश्र जी ने अंग्रेजों के स्वभाव की तुलना करते हुए कुछ तथ्य प्रस्तुत किए हैं, यथा - "... अंग्रेज एक बन्द कौम है । और यहाँ गप मारने की वह लत नहीं है, जो हम हिन्दुस्तानियों में होती है । इस तरह अपने में बूँद बूँद व्यक्ति जहाँ एक तरफ स्वार्थी होते चले जाते हैं, वहाँ दूसरी तरफ जिंदगी का कितना कुछ खो भी देते हैं"।[2]

1- धुँध भरी सुर्खी - पृ0 5.
2. वही - पृ. 143

स्पष्ट होता है कि हम भारतीय कम धैर्यवान और अधिक गप्पी (बातून) होते हैं। दूसरी ओर हमारे यहाँ पारिवारिक बन्धन बड़े ही दृढ़ होते हैं, जबकि अंग्रेजों के यहां ऐसा कुछ भी नहीं दिखायी देता। पति-पत्नी के सम्बन्ध तो तभी तक स्थायी रहते हैं जब तक उनके विचार मेल खाते रहते हैं, यथा - "हमारे यहां बुढ़ापे में प्रेम की आँच देने वाले नाती-पोते हैं। इन बेचारों के यहाँ क्या है ? .... मजे की बात तो यह है कि यहाँ का आदमी थोड़ा सा भी तनाव नहीं सह सकता, बड़ी जल्दी बौखला जाता है।"[1]

हिन्दुस्तानी जैसी आत्मीयता और तत्पश्चात् बिछोह तथा वैराग्य यहाँ नहीं हैं। भारत में जैसे दोनों ही स्थितियाँ चरम पर हैं और हम एक प्रकार की अन्तरंगता के स्तर पर जीवित हैं, जबकि यहाँ तटस्थता है। भारतीयों की अच्छाई के साथ-साथ अंग्रेज जाति की भी अच्छाइयों को गिनाते हुए मिश्र लिखते हैं कि - "यहाँ अफसर के मानी एक ऐसा आदमी नहीं है, जिसके पास चपरासियों की फौज हो। यहाँ का समाज एक खुला समाज है, हिन्दुस्तान जैसे बन्धन नहीं हैं, लेकिन वेश्याओं के तौर-तरीके सब जगह एक से होते हैं।"[2]

"ब्रिटेन में किसी कर्मचारी या अधिकारी को होशियारी से पैसा कमाने की लत नहीं है। उन्हें पैसा चाहिए तो मांग लेंगे, टिप्स या किसी और जरिये से, लेकिन हिन्दुस्तानी हर काम को इस तरह ऐंठना चाहता है, जिससे कि कुछ पैसे चू पड़ें। ...... यहाँ का कर्मचारी सेवक है, जबकि हिन्दुस्तान का कर्मचारी मालिक। मजाक सबसे बड़ा यह है कि हमारे दफ्तरों का सिस्टम इंग्लैण्ड की ही विरासत है।[3]

यहाँ (इंग्लैण्ड में) जनमत बहुत महत्त्वपूर्ण है, जिसके आगे सरकार को भी झुकना पड़ता है।

1- धुन्ध भरी सुर्खी - गोविन्द मिश्र, पृ0 169-170.
2 वही पृ - 6
3. वही पृ 169

अंग्रेजों की स्वार्थपरता और परर्थता की तुलना भारतीयों से करते हुए मिश्र ने लिखा है - "अंग्रेज व्यक्तिगत मामलों में तो जरूर बनिया है, लेकिन जहाँ दूसरों के मामलों या सार्वजनिक मामलों की बात होती है, वह बड़ा ही निस्संग रवैया अपना लेता है । हिन्दुस्तानी की निरसंगता और दार्शनिकता सिर्फ अपने ही मामलों को लेकर है । जब दूसरों के या सार्वजनिक मामलों की बात आती है, तब वह निहायत दकियानूस बन जाता है ।"[1]

इस प्रकार अन्य अनेक स्थलों पर भी मिश्रजी ने अपनी इस पुस्तक में भारतीयों और अंग्रेज जातियों का अत्यन्त सूक्ष्म एवं तीव्र दृष्टि से विश्लेषण किया है ।

प्राकृतिक एवं ऐतिहासिक स्थलों का रोचक वर्णन -

गोविन्द मिश्र ने अपने इस यात्रावृत्त में प्राकृतिक स्थलों जैसे नदी, पर्वत, समुद्र के दृश्यों और लंदन पैरिस के ऐतिहासिक स्थलों का बड़ा ही सजीव और रोचक वर्णन प्रस्तुत किया है । लन्दन शहर, वहाँ के विविध दर्शनीय स्थलों जैसे टावर ऑफ लन्दन, हाइड पार्क, ब्रिटिश म्यूजियम, कैथीड्रल चर्च, पेटीकोट लेन मार्केट, बकिंघम पैलेस, वेस्टमिनिस्टर एब्बी, पार्लियामेंट, आक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय, कासिल, ब्रिस्टल और कार्डिफ जैसे अन्य शहर, वेल्स, एंग्लेस पुल, आइ फिलटावर, पेरिस नगर और इनके अतिरिक्त टेम्स नदी, कैल्बिन नदी, समुद्र तटीय दृश्य, घने कुहरे और बादलों से आच्छादित पर्वत श्रृंखलाएँ एवं रिमझिम होती बारिश का सुहावना मौसम इन स्थलों को और भी मनोहारी बना देता था ।

प्रसिद्ध संस्थाओं से सम्पर्क -

गोविन्द मिश्र जी ब्रिटिश काउंसिल के प्रशिक्षण कोर्स के अन्तर्गत तीन माह हेतु इंग्लैण्ड के प्रवास पर निकले थे । इस प्रशिक्षण पाठयक्रम के दौरान उन्होंने कुछ अन्य संस्थाओं से भी सम्पर्क साधा था । इनमें से मुख्य संस्थान हैं - रौयल इंस्टीटयूट ऑफ पब्लिक

---

1 धुन्ध भरी सुर्खी - डॉ. गोविन्द मिश्र - पृ. 169

एडमिनिस्ट्रेशन, टैविस्टौप इंस्टीटयूट, सोसायटी ऑफ आथर्स, लन्दन तथा वैस्ट हेम्पस्टैड राइटर्स क्लब, लन्दन राइटर्स सर्किल, ट्रांजैक्शनल एनौलिसिस ‖प्रशिक्षण‖ हौर्शम आदि ।

रौयल इंस्टीटयूट में मि0 साइक्स कोर्स के निदेशक थे तथा संस्थान के निदेशक थे जॉन सार्जेंट । यह हैमिल्टन हाउस की चौथी मंजिल पर स्थित था । टैविस्टौक इंस्टीटयूट में कंसलटैंट थे मि0 लारेंस, वुडलैंड फार्म हाउस में प्रोग्राम अफसर थी - मिसेज मैडिंग्स । वैस्ट हैम्पस्टैड राइटर्स क्लब की सचिव थी मिस0 क्लेटन । लेखक ने सभी से सम्पर्क किया था ।

कुछ कारूणिक शब्द चित्र -

गोविन्द मिश्र मूल रूप से एक कहानीकार हैं । अपने यात्रावृत्त में से कई रूपों में प्रकट हुए हैं । "धुँध भरी सुर्खी" कहानी, उपन्यास, डायरी, यात्रावृत्त.... सभी विधाओं के विशिष्ट तत्वों के समावेश से स्वयं एक विशिष्ट वस्तु बन गयी है । इस पुस्तक में कहीं तो यात्रा की ही तरह कहीं भागता और कहीं थमकर जुगाली करता गद्य दृष्टिगत होता है । इस "धुँध भरी सुर्खी" में कुछ स्थितियों के शब्द चित्र बड़े ही कारूणिक हैं जिनके आधार पर वे कहानियां भी लिख चुके हैं । जैसे - इंगलिस्तान में बसे अपने भाई-बन्धुओं के विशेष रूप से दयनीय प्रतिनिधि "भाई जान" ‖पृ0 58-61‖, मार्क में मिली शैला हस्बैंड और उसकी युवा पुत्री लायला ‖पृ0 83-86‖ और ग्लासगो में मिले एक लंगड़े भिखारी ‖पृ0 105-107‖ के सजीव वर्णन विशेष सार्थक बन पड़े हैं ।

श्रृंगारिक वर्णन -

गोविन्द मिश्र एक विनोदी स्वभाव वाले मनमौजी, स्पष्ट वक्ता और श्रृंगार प्रिय लेखक लगते हैं । जैसे अपनी कुछ कहानियों और उपन्यासों में जहाँ कहीं उन्होंने श्रृंगार रस का खुलकर प्रयोग किया है, वैसे ही "धुँध भरी सुर्खी" में भी यत्र-तत्र श्रृगारिकता समा गई है । होटल हो या रेल यात्रा, पार्क हो या अन्य स्थल वे महिलाओं और लड़कियों की ही चर्चा करने लगते हैं । एकाध स्थल देखिये -

"रात के पौने दो बज रहे हैं, मैं जग गया हूँ । बगल के कमरे से आवाजें उठ रही थीं । कुछ देर पहले तक तीन-चार जनों का हल्ला-गुल्ला था, फिर एक जोड़ा रह गया एक औरत की सिसकियाँ उठती रहीं......मैं ऊँघ के नशे में इन सबके ऊपर तैरता रहा।"[1]

बुश हाउस एक काउंटर पर एक वृद्ध से भेंट वार्ता -

शादी हो गयी ?

यहाँ तो क्वाँरा हूँ ।

साथी की जरूरत पड़ती होगी ?

हाँ, मिल जाये तो बहुत अच्छा ।

आदमी या औरत ?

यहाँ मैं पहली बार कुछ लड़खड़ाया वह ललचाई नजरों से सामने देख रहा था ।

- औरत मैंने कुछ जोर देकर कहा ।"[2]

और फिर थोड़ा ही आगे -

"फिर जाग गया हूँ । × × × बगल के कमरे में फिर सिर्फ दो आवाजें एक भारी दूसरी महीन, फुसफुसाहट की कगार पर । धीरे-धीरे उभरती सिसकियाँ जिन पर ये पेशेवर औरतें हर रोज आदतन गुजारती हैं ।"[3]

एक अन्य स्थल पर खुला श्रृंगार -

"पार्क छोटा था । थोड़े-थोड़े फासले पर ही तीन - चार बैंचे थीं । उधर की आखिरी बैंच पर एक जोड़ा था लड़के के ऊपर गिरती एक मोटी सी लड़की जोशीले चुम्बन और आलिंगन ।"[4]

1- धुँध भरी सुर्खी, पृ0 12.
2- वही, गो0 मि0, पृ0 28-29.
3- वही, पृ0 31.
4- वही, पृ0 182.

"झूलती जड़ें" अपने (भारत) देश में यात्रा पर गोविन्द मिश्र की प्रथम प्रस्तुति है। इस पुस्तक की भूमिका में वे स्वयं स्वीकार करते हैं कि अपने देश में क्या नहीं है ? × × × अपने देश में किसी नयी जगह को खोजने का सुख कुछ कुछ वैसा ही है जैसे अपने दोस्त का कोई वह रूप सामने आए जाये जो अब तक अनदेखा रहा हो और जो हमें उसके और पास खींच लाये । भारत के अलग-अलग भूखंडों में घूमते हुए एक प्रीतिकर प्रतीति यह भी बराबर होती रहती है कि हम उन जड़ों के बीच से गुजर रहे हैं जो इस प्राचीन वट वृक्ष की जटाओं के रूप में नीचे की तरफ लटकी हुई हैं, झूल रही हैं ।[1]

इस स्वदेशी यात्रावृत्त में भी मिश्र जी ने अनेक अनुभव और उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं । जहाँ उन्होंने विभिन्न प्राकृतिक स्थलों, एवं दृश्यों को समीपता से देखा है, वहीं विश्व की प्राकृतिक सम्पदा से भी तुलना की है । और शायद इसी वजह से उन्होंने कहा भी है - व्यर्थ ही हम विदेश यात्रा के लिए लार टपकाते रहते हैं । अपने देश में क्या नहीं है - बर्फ, पहाड़, मैंदान, नदियां, रेगिस्तान, जंगल, समुद्र, इतिहास, भूगोल - सभी कुछ तो है यहाँ ।"[2] यही नहीं पारम्परिक सांस्कृतिक रीति-रिवाजों, आर्थिक स्तर, रहन-सहन और परिधान तथा प्राचीन और आधुनिकीकरण के मध्य झूलते आदिवासियों की दशा को भी उन्होंने जाँचा परखा है । विदेशों में जैसे अंग्रेज कौम से मिश्रजी का अधिक सामना हुआ है । तो अपने ही देश में आदिवासी जनजातियों के जीवन को उन्होंने कुछ अधिक निकटता से देखने का प्रयास किया है ।

1- झूलती जड़ें (भूमिका से) गोविन्द मिश्र - पृ0 7.

2- वही. - पृ 7

आदिवासियों का जीवन-स्तर -

आदिवासी जनजातियों की जीवन पद्धति को समीप से देखने की मिश्रजी की इच्छा काफी बलवती थी, इसीलिए उन्होंने अपने भ्रमण में इन्हीं स्थलों को चुना है । वे लिखते हैं -

"भारतीय आदिवासियों को उनके अपने परिवेश में देखने की इच्छा कब से थी.... उस तरह की जीवन-पद्धति शुरू से ही आकर्षित करती रही मुझे सरल-प्रकृति के इतने पास, भारतीय समाज-व्यवस्था के बाहर इसलिए उनकी बुराइयों से दूर, प्रकृति के दूसरे अंगों की तरह सिर्फ उसी पर आश्रित"।[1] मिश्रजी ने आदिवासी जनजातियों के विभिन्न रूप हमारे समक्ष प्रस्तुत किए हैं । एक ओर वे अत्यन्त सीधे सादे और भोले भाले लगते हैं, आधुनिकता विकासवाद से अपरिचित से दिखाई देते हैं, तो दूसरी ओर वे कट्टर परम्परावादी और खूंखार भी होते हैं । जहाँ वे अपने कर्तव्य पालन में संलग्न और परिश्रमी होते हैं वहीं उनका उग्र रूप भयानक भी है और वे भौतिकवाद के मोह से ग्रसित भी दिखाई देते हैं । द्रष्टव्य हैं उनके विविध रूप -

क- **सरल प्रकृति एवं सादा रहन-सहन -**

मिश्रजी ने आदिवासियों की सरल प्रकृति, भोला स्वभाव, सादा रहन-सहन और आधुनिक चमत्कार से दूर रहने का वर्णन प्रस्तुत किया है । वे कहते हैं - "नौजवानों के पास टेरिलीन की कमीजें, टीन का बक्सा या फिर रबड़ की चप्पलें । औरतों के आधे हाथों में चूड़ियाँ ही चूड़ियाँ, गले में मालाओं के ढेर या फिर कानों और बालों में फँसे हुए नकली जेवर । ....वे आदिवासी थे........यह उनके निर्दोष चेहरे से झलक जाता था । खाली-खाली चेहरा आँखें ..... कुछ नहीं था उनमें । एक अपनी ही तरह की शून्यता, जहाँ खालीपन का नकारात्मक तत्व भी नदारद हो । × × × × सरल, फिर भी पुख्ता इंतजाम, पुष्ट स्तन धोती की हल्की आड़ में, पर इधर-उधर से झलकते हुए, बच्चों को दूध पिलाते समय एकदम खुले हुए - झेंप की कहीं कोई खरोंच नहीं ।[2]

1- झूलती जड़ें - (सभ्यता से सर्पो के बीच बस्तर) पृ0 11.
2- वही, पृ0 12.

किसी सरकारी कर्मचारी के डाँटने पर ही वे सहम जाते थे, अजीब सहन शक्ति है इनमें - "आदिवासी सहम कर पीछे हटते, पर कहीं जगह हो तब न ...... चुपचाप सारी दुत्कार झेले जा रहे थे ।[1]

उनके रहने के घर कुछ फासले पर होते हैं, घास-फूस से ढकी हुई बाँस की चाहरदीवारी होती है - "कच्चा रास्ता पार करते हुए जब हम कुछ फूस के घरों तक पहुँचे तब जोशी जी ने बताया कि यही घोटपाल गांव है । आदिवासियों की यह पहली बस्ती थी, जो मैंने देखी । फासले-फासले पर उगे हुए घर, फाड़े गए बाँसों की बनाई गई चाहरदीवारी के छिके हुए और सूखी घास के ढके हुए ।[2]

और "आदिवासी गांव भी तो ऐसी बिखरी-बिखरी बस्ती होती है कि रास्ते में वहाँ पड़ा .... यह पता ही नहीं चलता ।[3]

पूर्वांचल की आदिवासी बस्ती का उल्लेख करते हुए वे लिखते हैं - "घर छोटे खम्भों पर बनी लकड़ी की एक झोंपड़ी । बिजली यहाँ कहाँ, रोशनी के लिए मिट्टी का तेल ..... एक घर के भीतर जाकर हमने देखा - बाँस की खपच्चियों का फर्श, ऊपर फूँस । एक बड़ा सा कमरा ही, वहीं एक तरफ रसोई एक तरफ बकरी और और उसके बच्चे और वहीं परिवार के सब लोग रात को सो जाते हैं । घर के आस-पास ही थोड़ी खेती की जमीन, इधर-उधर दौड़ती मुर्गियाँ, जरूरत भर का सामान ।"[4]

ख- परम्परावादिता -

आदिवासी लोग कट्टर परम्परावादी भी होते हैं । आज भी उनमें प्राचीन परम्पराओं का परिपालन दिखाई देता है । विवाह के वही परम्परागत रीति-रिवाज, देवी-देवताओं की

1- झूलती जड़ें (सभ्यता के सर्पों के बीच बस्तर) पृ0 12.
2- वही, पृ0 13.
3- वही, पृ0 19.
4- वही (पूर्वांचल प्रकृति) पृ0 119-120.

पूजा अर्चना और पहनावा । देखिये वैवाहिक परम्परा - "यहाँ (बस्तर) के आदिवासी लड़के-लड़कियों के सम्बन्ध या तो ऐसे (मिले) के मौकों पर या फिर धादुलों में शुरू होते हैं, जो आगे चलकर विवाह का रूप ले लेते हैं ।[1]

यहाँ विवाह के पहले लड़कियों की काफी स्वतंत्रता है, लेकिन एक बार बंध जाने के बाद अब यह जिसके साथ चाहे नहीं बैठ सकती । ब्याह तय होते ही लड़के वाला लड़की वाले से यहाँ सल्फी या कोई और दारू, कम से कम दो गायें, एक बकरी एक मुर्गा और एक सूअर भेजता है ।[2]

ये लोग आज भी धनुषबाण धारण करते हैं और पक्के निशाने बाज तथा साहसी होते हैं ।.......

"एक दो नौजवान धनुषबाण से हमें आतंकित करने की कोशिश कर रहे थे ।"

जानवरों से रखवाली के लिए कभी भी इन लोगों के पास आवाज करने को ढोल और मारने के लिए धनुषबाण हैं । ये लोग अच्छे निशाने बाज होते हैं और सीधा जानवर के कलेजे पर वार करते हैं ...... इस तरह धनुष बाण भी उनके लिए बंदूक से कम नहीं हैं ।"[3]

निकोबार द्वीप समूह की महिलाओं की परम्परागत पोशाक का जिक्र करते हुए मिश्रजी लिखते हैं - "रहने वाले पुराने हैं निकोबारी । नाक-नक्श, वेश-भूषा वर्मा के लोगों से काफी कुछ मिलती जुलती है । औरतों की पोशाक - सरोंग जैसी एक लुंगी-कमर में कसा एक कपड़ा और ऊपर फूला-फूला ब्लाउज ।[4]

1- झूलती जड़ें - सभ्यता के सर्पों के बीच बस्तर, पृ0 14.

2- वही, पृ0 16.

3- वही, पृ0 24.

4- वही, (काला पानी के इतिहास में उतरता अंडमान निकोबार), पृ0 32.

ग- **सामूहिक जीवन पद्धति** -

मिश्र जी ने आदिवासियों की उस जीवन-पद्धति का भी उल्लेख किया है जो सामूहिक होती है ।

"अंडमान-निकोबार द्वीपवासी आदिवासियों की सामूहिक जीवन-पद्धति की ओर संकेत करते हुए मिश्रजी ने लिखा है -

"निकोबारियों की सामूहिक जीवन-पद्धति । हर गांव में एक कप्तान, उसके नीचे दूसरा, तीसरा कप्तान । कप्तान का आजीवन पद है और उसकी बात गांव में सर्वमान्य होती है । यहाँ तक कि कौन किस जमीन को कमायेगा, कौन कहां घर बनायेगा, यह भी कप्तान ही तय करता है । एक घर की समस्याएँ पूरे गांव की समस्याएं होती हैं । बड़ा परिवार एक ही जगह, घरों के अलग-अलग समूहतुहैट में रहता है । खाना एक ही जगह पकता है ।[1]

बस्तर के आदिवासी जीवन में भी ऐसी ही पद्धति देखने को मिलती है । वहाँ भी गांव के कोटवार का पुश्तैनी पद होता है, जो गांव के जन्म-मृत्यु, क्राइम आदि की रिपोर्ट पुलिस को देता है ।[2]

इसके (कोटे के) अलावा बिजा (मुखिया), पीड़ (सरपंच) भी होते हैं । कोटे को पटेल कहते हैं ।

इसमें वर्ण-भेद नहीं होता और स्त्री-शोषण तथा गरीब अमीर का भेद भाव नहीं देखने को मिलता । लिखा भी है -

---

1- झूलती जड़ें (काला पानी के इतिहास में ......) पृ0 32.

2- वही (सभ्यता के सर्पो के बीच......) पृ0 24.

"बस्तर के आदिवासियों में भी ..... औरतों की स्वतंत्रता की वही कद्र । न ही स्त्रियों पर किये जाने वाले जुल्म हैं यहाँ और नहीं वर्ण-व्यवस्था का शोषण अमीर-गरीब की खाई भी नहीं है । सम्पत्ति पर व्यक्तिगत अधिकार की भावना भी अब आई है वह भी शहरी संस्कृति के चलते .... ।[1]

आदिवासियों के प्रति शासकीय सहयोग -

आधुनिक सभ्यता के विकास के नाम पर आदिवासियों के साथ कुछ शासकीय सहयोग भी दिया जा रहा है । इस सहयोग में इनके कुछ गांवों पर रेवेन्यू कानून लागू नहीं है, नहीं अन्य कानून लागू हैं तथा शिक्षा का भी विस्तार किया जा रहा है । द्रष्टव्य हैं कुछ प्रामाणिक स्थल -

"बस्तर में अबूझमाड़, आदिवासियों के लिए सरकार द्वारा रक्षित क्षेत्र है । यहाँ आदिवासियों का आधिपत्य, उनकी जीवन चर्या आदि में हस्तक्षेप करने का किसी को अधिकार नहीं है । रेवेन्यू कानून भी यहाँ लागू नहीं किये जाते । शहरी सभ्यता के प्रभावों से दूर यहाँ आदिवासियों को उनके आदिम रूप में तो नहीं काफी कुछ पाक रूप में देखा जा सकता है ।[2] और शिक्षा के क्षेत्र में - "अबूझमाड़ के लिए आश्रम टाइम स्कूलों की परिकल्पना की गई है । आदिवासी लड़के यहाँ पढ़ते और रहते हैं । हर लड़के को 75 रूपया प्रति माह मिलता है, जिससे उसके खाने, पहनने का भी खर्चा निकलता है । अध्यापक भी आदिवासी युवक थे । एक ट्रेनिंग देकर ऐसे किसी स्कूल का अध्यापक बना दिया जाता है - आदिवासी को नौकरी मिले और वे शहर की तरफ भागे भी नहीं ।[3]

आदिवासियों के साथ अन्याय -

जहाँ आदिवासी लोगों के विकास उनकी सुरक्षा और नौकरी का प्रबन्ध शासन द्वारा

1- झूलती जड़ें (सभ्यता के सर्पों के बीच .....) पृ0 14.

2- झूलती जड़ें, पृ0 17.

किया जा रहा है, वहीं उनके साथ आधुनिक सभ्यता के विकास के नाम पर यत्र-तत्र अन्याय भी किया जा रहा है । वे भृष्टाचार के भी शिकार हो रहे हैं । इस बात से मिश्रजी को कुछ दुख हुआ हो जिसे उन्होंने इस पुस्तक में व्यक्त भी किया है - देखिये -

"जोगा को शिकायत थी कि उसकी जमीन को ईंटें पकवाने वाले ठेकेदार ने दाब लिया है, पटवारी आकर कह गया है कि वह जमीन सरकारी थी, जबकि जोगा का ख्याल था कि सड़कें उस की जमीन पर है । मुझे लगा कि जब आदिवासी विकास के लिए हम कुछ करते हैं, शहरी इसी तरह पहुँचकर शोषण शुरू कर देते हैं - फिर हम कैसे यह अपेक्षा करें कि आदिवासी को हम पर, हमारी योजनाओं पर विश्वास होगा ?"[1]

एक ट्रक ड्राइवर के भृष्टाचार की ओर भी संकेत किया है - "वहाँ सिर्फ वही एक घर था, जहाँ ट्रक ड्राइवर के लिए कोई प्राइवेट शो चल रहा था । तो शहरी भाई यहाँ सुदूर जंगल में भी कोठेबाजी का भृष्टाचार फैलाने में कामयाब हो गये ।[2]

कोटे (पटेल) द्वारा कुछ माँगने पर मिश्रजी का मन छट पटा उठता है और वे लिख बैठते हैं - "मुझे अफसोस हुआ हमारा सम्पर्क कैसे इन्हें करीब - करीब भिखारी बनाता जा रहा है । प्रकृति के इतने पास-फिर भी जैसे छुआ छूत से हमारी बीमारी इन लोगों में भी घर करती जा रही है । छटपटाहट, यह पाने, वह पाने के लिए .... क्योंकि वे देखते हैं कि यह सब हमारे पास है । × × × × और अगर हम हर गांव के लिए अलग-अलग छोटी-छोटी योजनाएँ बनायें, तो बाकायदे में जरूरतें पूरी की जा सकती हैं । × × ×[3]

अबूझमाड़ की दूसरी ओर ठीक विपरीत कौशल नगर में जंगली (वन) विभाग के कानून कड़ाई से लागू होते हैं - लिखा है - कौशलनगर में जंगल विभाग के कानून लागू होते हैं, इसलिए वहाँ के आदिवासियों की शिकायत जंगल के कर्मचारियों से थी मकान बनाने के लिए लकड़ियां भी नहीं उठाने देते, जरा सी बात पर जुर्माना कर देते हैं ।[4]

1- झूलती जड़ें, पृ0 16.
2- वही, पृ0 19.
3- झूलती जड़ें (सभ्यता के सर्पों के .....) पृ0 22.
4- वही, पृ0 23.

निर्धनता के कारण वे अपना इलाज भी नहीं करा पाते हैं और यों ही रोग को पालते रहते हैं । कौशल नगर में यह देखने को मिला - मैंने देखा कि उनके घर के करीब-करीब सभी लोगों को किसी न किसी किस्म का चर्म रोग था । वे अस्पताल नहीं जाते, क्योंकि पैसे लगेंगे ।[1]

निकोबार द्वीप समूह में सहकारिता के नाम पर जो काला धन्धा किया जा रहा है, वह भी मिश्र को अन्यायपूर्ण लगा और लिख गये - "मुझे यह जानकर क्लेश हुआ कि चावल और चीनी निकोबारियों को बम्बई से भी मँहगे मिलते हैं जबकि कहा जाता है कि यहाँ गाँव की दुकानें एक बड़ी सहकारी संस्था का हिस्सा है, जिसके सदस्य निकोबारी हैं । बाद में सुनने को मिला कि सहकारिता के नाम पर कुछ लोग धन्धा कर रहे हैं और इसमें उनकी मदद करते हैं गांव के कप्तान, जिन्हें शराब-सिगरेट देकर अपनी तरफ खींचे रखा जा सकता है ।[2]

कार-निकोबारियों की सामूहिक जीवन-पद्धति भी कुछ-कुछ विकृत हो चली है, इसी कारण मिश्र जी का मन कड़ुवाहट से भर जाता है -

"इसकी ओट में भी शोषण । आदमी का बच्चा कब छोड़ेगा हर हाल में अपना उल्लू सीधा करना, अपनी जेबें भरते चले जाना चाहे उससे दूसरों को कितनी ही तकलीफ क्यों न हो ?"[3]

डाक बंगलों की अव्यवस्था -

मिश्रजी ने एक यह अनुभव भी अच्छी तरह किया है कि सरकारी सम्पत्ति इमारत और उसकी सुरक्षा के लिए नियुक्त सरकारी कर्मचारी भी काफी लापरवाह हो गए हैं । पंचमढ़ी तथा अन्यत्र डाक बंगलों की अव्यवस्था को देखकर उन्हें वेदना हुई । वे लिखते हैं -

---

1- झूलती जड़ें - (सभ्यता के सर्पों के ......) पृ0 23.
2- वही (कालापानी के इतिहास में), पृ0 33.
3- वही, पृ0 34.

"इन सरकारी डाक बंगलों का अब तो ऐसा खस्ता हाल होता है कि न साफ चादर-तकिये मिलते हैं और न खाने का ही कोई इंतजाम होगा, रूपये खर्च करने को तैयार हो तो भी वहाँ कहीं कोई जुबिश नहीं । × × × वैसे पंचमढ़ी में जितनी सैलामियों के लिए ठहरने की जगहें हैं, उससे ज्यादा सरकारी कर्मचारियों के ठहरने के लिए हैं । गर्मियों में आधी मध्य प्रदेश सरकार उठकर आ जाती है यहाँ, क्यों नहीं वायसराय भी तो शिमला जाते थे यह भी सुनने में आया है कि अक्सर ऐसा होता है कि सैलानी बेचारों को ठहरने के लिए कहीं जगह नहीं मिलती और सरकारी जगहें खाली पड़ी रहती हैं ।[1]

तामिया के डाक बंगले के कर्मचारियों का भी यही हाल था - "मेरे साथी ने बताया कि वैसे भी ये लोग दिन भर की कमाई में थक जाते हैं और शाम होते ही नशे की दुनियाँ में पहुँचकर बाहर की दुनियाँ को खारिज कर देते हैं । यह उनका तजुर्बा है ।[2]

इस प्रकार "झूलती जड़ें" यात्रा वृत्त में विविध उपलब्धियाँ प्राप्त होती हैं । जहाँ एक ओर आधुनिक विज्ञान विकसित होकर सर्वत्र पैर पसार रहा है, वहीं दूसरी ओर विकसित सभ्यता के नाम पर भृष्टाचार और शोषण भी पनपता दृष्टिगोचर हो रहा है ।

[redacted] -

[redacted] -

1- झूलती जड़ें - (रंगों की गंध में लिपटी - पंचमढ़ी) - पृ0 62.

2- वही, (तामिया में तूफानी रात), पृ0 74.

इसी प्रकार के कुछ और भी रोचक वर्णन प्राप्त हो जाते हैं "धुँध भरी सुर्खी" यात्रावृत्त पुस्तक में ।

शिल्प -

साहित्य की विविध विधाओं की दृष्टि से उनका शिल्प विधान भी विविधता लिए होता है । काव्य के लिए शिल्प-विधान दो प्रकार का होता है जिसमें उसके भागवत सौन्दर्य और कलात्मक सौन्दर्य की समीक्षा की जाती है, इनमें भी वर्ण्य-विषय प्रकृति-चित्र, रस-योजना, छन्द-अलंकारादि का प्रयोग विम्ब-विधान मानवीयकरण अथवा ध्वन्यात्मकता, भाषा शैली की विवेचना की जाती है, नाटक के अन्तर्गत अभिनेयता और संवाद योजना की समीक्षा करते हुए प्रकाश-प्रक्षेपण, वेशभूषा, ध्वनि प्रसारण आदि विधानों को भी दृष्टि में रखा जाता है, कहानी, उपन्यास, आत्मकथा, जीवनी आदि में विभिन्न तत्वों के आधार पर समीक्षा की जाती है, निबन्धों के लिए वर्ण्य विषय (वस्तु), भाषा शैली, घटना-वैविध्य और विशेषताओं का आलोचनात्मक वर्णन तो रहता ही है । उसमें इतिहास गत परिवेश भी समेटा जा सकता है । यात्रा-साहित्य प्रकृति चित्रण, घटना युक्त वस्तु-विवेचन, स्थान-दृश्यादि का सूक्ष्म निरीक्षण आत्मानुभूतिपरक यथार्थता से सम्बद्ध रहता है, इसलिए वर्णनात्मक और विवेचनात्मक शैलियों के अन्तर्गत सामयिक और स्थानीय भाषा का भी इसमें पर्याप्त योगदान रहता है । यात्रा वृत्त का यथार्थ वर्णन सूक्ष्म निरीक्षण तथा निजी अनुभूति के आधार पर किया जाता है ।

इस दृष्टि से गोविन्द मिश्र का यात्रा-साहित्य सूक्ष्म निरीक्षण एवं आत्मानुभूति के आधार पर किया गया यथार्थ वर्णन प्रस्तुत करता है । देश-विदेश में की गयी यात्राओं में उन्होंने जो देखा, जाँचा-परखा और अनुभव किया उसे ही सरल और ग्राहय भाषा-शैली शिल्प के अन्दर प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया है । वस्तुतः मिश्र जी के यात्रा वृत्तों का शिल्प विधान (भाषा और शैली) प्रभावशाली और सर्वग्राह्य बन गयी है । इसमें प्रयुक्त भाषा व शैली का समीक्षण इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है ।

भाषा - शिल्प -

कहानियों, उपन्यासों और न्बिन्धो में प्रयुक्त भाषा के अनुरूप ही गोविन्द मिश्र ने अपने यात्रा वृत्तों में भी नाना प्रकार की भाषा को स्थान दिया है । भाषा के विविध रूपों को अपनाया है किन्तु मुख्यता है सरल, सुबोध और प्रचलित मिश्रित भाषा का प्रयोग । फिर भी मिश्रजी के यात्रा-साहित्य मे प्रयुक्त भाषा को निम्न रूपों में रखा जा सकता है -

1- सरल-सुबोध भाषा, 2- साहित्यिक भाषा । 3- मिश्रित भाषा ।

1- सरल-सुबोध भाषा -

इस प्रकार की भाषा के अन्तर्गत उस भाषा का प्रयोग किया जाता है जो सरल हो, सुबोध और सर्व ग्राह्य लोक प्रचलित भाषा है वाक्य अपेक्षाकृत छोट-छोटे होते हैं । मिश्रजी ने अपने यात्रा वृत्तों की भाषा को प्रायः सरल, सुबोध, सर्वग्राह्य और प्रभावपूर्ण बना दिया है । उनकी ऐसी भाषा के कुछ नमूने यहाँ प्रस्तुत हैं - "धुंध-भरी सुर्खी", से उद्धरणीय स्थल -

"हिन्दुस्तानी के बारे में एक कमजोर बात यह है कि वह भाग्य और ज्योतिष में हमेशा ही कमोबेशी विश्वास रखता हुआ मिलेगा । बाहर से खुद को घोर अविश्वासी दिखाने वाला भी हाथ पढ़ने वाले के सामने अपनी हथेली पसार देगा और उदासीनता दिखाने को आँखें दूसरी तरफ किए हुए, अंदर ही अंदर मुस्कराता हुआ अपने भाग्य के बारे में सुनेगा और जानना चाहेगा ...... बड़े-बड़े नेता और व्यापारी तो हर काम विचरवाकर ही करते हैं । मैं मित्रों को बताता कि भविष्यवाणी तो दूसरी ही है, तो वे कहते हैं, भाई, कर्मो से भाग्य बदल भी जाता है, रेखाऐं बदलती भी तो रहती है लचक विचारधारा और तर्कबाजी में हम भारतीयों का जबाब नहीं ।"[1]

1- "धुंध-भरी सुर्खी" - पृ0 ।.

लन्दन शहर की पहली सुबह बादल और हल्की बारिश । नाश्ते के बाद हममे से कुछ बगल के पोस्ट आफिस चले गऐ और वहाँ सकुशल पहुँचने के कुछ पत्र लिखे । तब एक अभय आ गया ...... यहा एक साल से था ... आते ही उसे फोन कर दिया था ।"[1]

और एक जगह मौसम तथा मनुष्य की आदत का वर्णन कितना सहज है - "टिप-टिप से भरी शाम जल्दी ही रात में बदल गई । सुनसान जगहों में रात वैसे ही जल्दी हो जाती है । बड़े शहर आदमी को कितना निकम्मा कर देते हैं कि एका एक छोटी सी जगह पर खुद को पाकर समय पहाड़ सा ऊपर लदा महसूस होता है । फिर यहाँ तो घूमने के लिए जाने का सिलसिला नहीं था । आस पास सुनसान गलियाँ और धीमें-धीमें झूमते लंबे-लंबे दरख्त ...... उतराते हुए धब्बों की तरह जिन्दगी की निरर्थकता का अहसास देते हुए ।"[2]

बैंगर शहर के दृश्य की भाषा भी कितनी सरल बन पड़ी है, वहीं हरिद्वार से उसकी तुलना कितनी सहज और सुबोध है - "बैंगर को देखकर हरिद्वार की याद आ गई । वैसी ही लम्बाई में पहाड़ी की जड़ पर फैला शहर । वहाँ गंगा, तो यहाँ समुद्र । हरिद्वार जितना गंदा है, उतना ही यह साफ-सुधरा, फिर भी पवित्रता की जो महक हरिद्वार से उठती है, वह यहाँ कहाँ ? फिलहाल मेरे सामने था पहाड़ी के सिलसिले पर सर टिकाये एक छोटा सा शहर, दोनों तरफ देखें तो पहाड़ियों में कैद-गो कि कुछ हिस्सा अब एक पहाड़ी के पार भी है ।"[3]

1- "धुँध-भरी सुर्खी" - पृ0 8.

2- वही, पृ0 45.

3- वही, पृ0 162.

लुब्ब नाम अजायवघर का वर्णन देखिए -

"आज का दिन हमने लुब्ब देखने के लिए रखा था । सीधे वहीं पहुँचे । बड़ी भीड़ थी । लुब्ब संसार के बड़े अजायवघरों में से एक है । अपने जमाने के बड़े महल के दो तिहाई हिस्सों में फैला, अलग-अलग विभागों में बंटा हुआ । अच्छी खासी विक्षिप्ति होती है कि कहाँ से शुरू करें और कहाँ निकलें ।"[1]

ऐसे ही और भी अन्य अनेक स्थल देखे जा सकते हैं ।

"झूलती जड़ें" से -

इस यात्रा वृत्त में भी सहज, सरल भाषा के अनेक उद्धरण मिल जाते हैं । वैसे सम्पूर्ण यात्रा वृत्त ही सरल भाषा में लिखा गया है, तथापि कतिपय स्थल -

आदिवासियों का वर्णन, रेल के डिब्बे में चढ़ने को बेचैन - "कोत्तवल्सा स्टेशन पर आदिवासियों का एक झुंड बौखलाया सा इधर से उधर भागता हुआ दिखा । सब एक ही डिब्बे में घुसने को बेचैन । मुझे बुंदेलखंड के चैतुओं की याद आ गयी । चैतुए चैत के महीने में खेत-कटाई के मजदूर, जो झुंड के झुंड इस गांव से उस गांव जाते हैं, एक ही डिब्बे में घुसने को आतुर ।"[2]

और फिर आगे - "मैंने डिब्बे का दरवाजा खोला, तो वे बलबलाते हुए अंदर चले आए । तब आम भारतीय ग्रामवासियों और उनमें फर्क करना मुश्किल था । वे शायद हाट से लौट रहे थे - नौजवानों के पास टेरिलीन की कमीजें, टीन का बक्सा या फिर रबड़ की चप्पलें औरतों के आधे हाथों में चूड़ियां, गले में मालाओं के ढेर या फिर कानों और बालों में फँसे हुए नकली जेवर ।"[3]

1- "धुँध-भरी सुर्खी" - पृ0 186.
2- "झूलती जड़ें" - पृ0 11.
3- वही, पृ0 11-12.

इन्द्रावती नदी क्षेत्र एवं जंगल का वर्णन -

"इन्द्रावती इस इलाके की बड़ी नदी है, पार अबूझमाड़ का इलाका । घना जंगल और एक ही रास्ता कच्चा । हम सीधे बढ़ते चले गए । एक घंटा चलते रहे, फिर मुझे खटका हुआ, हंदावाड़ा तो बाईस किलोमीटर था, कहाँ गया ?[1]

कार-निकोबार द्वीप का वर्णन - "....... यह कार-निकोबार था - गोल-गोल, बेहद खूबसूरत द्वीप, नारियल के घने पेड़ों से पटा हुआ । समुद्र के किनारे-किनारे गोलाई में ही घूमती हुई एक मात्र सड़क, जापानियों की बनाई हुई । तरह-तरह के समुद्र तट । बेहद साफ । चिकनी रेत ।"[2]

तामिया डाक बंगले की भौगोलिक स्थिति -

"तामिया, छिंदवाड़ा जाने वाले रास्ते पर पड़ता है । मध्य प्रदेश में छिंदवाड़ा जिला अपने घने जंगलों और पेड़ों के लिए प्रसिद्ध है । शहर होने के कारण खास छिंदवाड़ा का जंगल तो काफी कुछ छट गया है, तामिया में अब भी वह घना और खूबसूरत है । छोटी सी तामिया बस्ती छिंदबाड़ा रोड़ के किनारे-किनारे है । यहाँ का मुख्य आकर्षण तामिया का डाक बंगला है, जहाँ से सतपुड़ा पर्वत श्रृंखला का अद्भुत दृश्य दिखता है ।"[3]

गौहाटी (गुआहाटी) का अर्थ स्पष्ट करते हुए प्रयुक्त सरल और सुबोध भाषा का रूप ग्रहणीय है -

---

1- "झूलती जड़ें" - पृ0 18.

2- वही, पृ0 32.

3- वही, पृ0 72.

"जिसे हम अंग्रेजियत में गौहाटी कहते हैं, वह दरअसल गुआहाटी है । ब्रहमपुत्र के दक्षिणी किनारे पर बसे इस नगर की हृवेनसांग ने बहुत प्रशंसा की है । यह पूर्व और पश्चिम के व्यापार का मार्ग था और इसलिए शुरू से ही संस्कृतियों का मिलन-बिन्दु । गुआ माने सुपाड़ी, हाटी माने बाजार, जो वह आज भी है ।"[1]

2- **साहित्यिक भाषा** -

यह भाषा अपेक्षाकृत शुद्ध तत्सम शब्दावली से पूर्ण, समस्त पदावली युक्त तथा गंभीर होती है । वाक्य कुछ लम्बे भी होते हैं और अर्थ में गंभीरता भी प्रतिबिम्बित होती है । मिश्रजी ने अपने यात्रा वृत्तों में यत्र तत्र एकाध स्थल पर ऐसी भाषा का प्रयोग किया है । दृष्टव्य है कुछ उदाहरण -

"धुँध-भरी सुर्खी" से -

जीवन कितना रहस्यमय है ? इसे समझना मनुष्यों के लिए कठिन है - देखिए - "कुछ उसी किस्म की उत्सुकता जैसी किसी नये समाज को देखने उसे समझने की होती है जो एक नये परिवेश से सिर्फ परिचित ही नहीं है, उसके नीचे कहीं जीवन को समझना भी है । अजीब चीज है जिन्दगी भी जिसे समझने की कोशिश तभी से जारी है, जबसे आदमी ने सोचना शुरू किया होगा और सभ्यता के इतने वर्षों के बाद भी आज वह वैसी ही पहेली बनी हुई है ।......[2]

और पुनः एक स्थल पर ऐसा ही उल्लेख -

"जिन्दगी में अपने मन का कर लेने की तरफ बढ़ने का यह हौसला हमारे देश में कितना कम है । हमारे यहाँ की लड़कियां तो छोड़िये कितने लड़के ऐसे हैं जो इस तरह धुन

1- "झूलती जड़ें" - पृ0 109.
2- "धुँध-भरी सुर्खी" - पृ0 2.

में बस चल पड़ते हैं और चलते चले जाते हैं । यह बात दीगर है कि वे कहाँ पहुँचते हैं । यूँ जिन्दगी में वैसे भी कोई कहाँ पहुँचता है कहीं नहीं, फिर बात तो सिर्फ यह बचती है न कि अपने मन से जो रास्ते खुलते हैं उन पर चला जाये और उस रास्ते पर चलते हुए बाहर की दुनियाँ का जितना कुछ अपने अन्दर उडेला जा सकता है उससे मन को और चौड़ा करता चला जाये......पुरानी झोली वाली कल्पना ही, मन पहले एक झोली तैयार करे तभी तो उसमें बाहर का कुछ भरा जा सकता है । हमारे यहाँ यह झोली तैयार ही नहीं होती । कितनी गाढ़ी उलझनें । इन सब कुछ में बेचारा आदमी गुड़ीमुड़ी पड़ा रहता है, खुल ही नहीं पाता ।"[1]

"झूलती जड़े से -

अंडमान द्वीप के निकटवर्ती समुद्धीय दृश्य का वर्णन तो बहुत ही अंच्छा बन पड़ा है, देखिये -

"नीचे समुद्र नहीं दिखता । दिखता है तो सिर्फ नीलेपन का विस्तार, जैसे आसमान ऊपर न हो, नीचे बिछा पड़ा हो । जहाँ-तहाँ चिपके बादलों के सफेद घोरे घनी हरियाली का एक गुच्छा सहसा उग आता है, जो फिर तनते रबड़ की तरह हवाई जहाज के दोनों तरफ पसरता चला जाता है, जैसे हरे रंग का कोई भीमकाय धनुष समुद्र में पड़ा उतरा रहा हो । अब नीचे समुद्र नहीं है घने जंगल का फैलाव है । कैसी अकलुषित हरीतिमा, आँखों में ठंडापन । .एक इसी अनुभूति के लिए ही अंडमान आया जा सकता था ।"[2]

वीरों की भूमि जौहरब्रत की स्थली मेवाड़ भूमि का साहित्यिक भाषा में विश्लेषण तो प्रभावपूर्ण ही लगता है -

"मेवाड़ - जीने और मरने, दोनों में जो एक चरम गरिमा अन्तर्निहित हो सकती है और जो दोनों को एक-दूसरे का पर्याय भी बना देती है, उसकी प्रतिमूर्ति । गरिमा.... उदासी

1- "धुँध-भरी सुर्खी" - पृ0 25.

2- "झूलती जड़े" - पृ0 28.

में लिपटी हुई, जैसे केसरिया बाना पहनकर रणबाँकुरों की टोली मर-मिटने को अभी-अभी इधर से निकली हो, ...एक एक योद्धा के चेहरे पर जमी सख्ती । या पद्मिनी और अन्य क्षत्राणियां गोमुख कुंड में स्नान कर जौहर के लिए एकत्र हुई हों - एक से एक सुन्दर चेहरे, अल के लिए प्राणोत्सर्ग करने को तत्पर, इसलिए देवीप्यमान ।[1]

और आगे नदियों और पर्वत श्रेणियों का महत्व - "हमारी नदियां, नदियों पर सदियों से खड़े तीर्थों के देवस्थान - इनसे शक्ति उद्भूत होकर हमसे प्रवेश करती है - जब जब हमें उस शक्ति का आधार सचमुच चाहिए, तब-तब हम दुर्बलता के तल से आ लगे हैं । मेवाड़ ही शायद भारत का ऐसा हिस्सा है जहाँ तीर्थ एक नदी या देवालय मात्र तक ही सीमित नहीं, समूचा भूखंड तीर्थ की तरह महकता है ।"[2]

पुनः -

"......कैसी आत्मीयता है इन लहरिये दार श्रेणियों में हिमालय के सामने होते ही हम बौने हो जाते हैं - क्या ऊँचाई, क्या धवलता । अरावली की पहाड़ियां बहुत अपनी लगती हैं, जैसे कहती हों, "बड़े होने के लिए ऊँचा होना जरूरी नहीं है । आओ हम तुम्हें राणा प्रताप की तरह छिपा लेंगी । तुम चलते रहोगे और चलते-चलते बड़े हो जा जाओगे ऊँचाई इतनी भर कि कोई लपक कर कभी भी पकड़ ले, वह नहीं जो हताश करे ।"[3]

इसी प्रकार ऋषभदेव केशरिया के प्राचीन मंदिर श्री नाथद्वारा मंदिर, मंदिर में श्याम रंग की चतुर्मुखी प्रतिमा आदि स्थल साहित्यिक भाषा के नमूने प्रस्तुत करते हैं जहाँ भाषा कुछ अलंकृत सी भी हो गयी है ।

1- "झूलती जड़ें" - पृ0 41.

2- वही, पृ0 41-42.

3- वही, पृ0 42.

भारतवर्ष की चार प्रमुख पर्वत श्रेणियों का संक्षिप्त एवं सारगर्भित वर्णन इस भाषा का उत्कृष्ट उदाहरण है -

"हिमालय पर चीड़ के पेड़, नम धरती से उठती आम के बौर जैसी मस्त सुगन्ध, झलक दिखाकर छिप-छिप जाती हिम चौटियाँ । नील गिरि का नीलावरण - वृक्ष और पत्थर भी हरे और नीले के बीच के रंग के । अरावली अपने तहरियोंदार फैलाव की हर परत में इतिहास छिपाये हुए और विन्ध्याचल जिस तरफ से पहुँचो उधर ही अलग छटा, अलग मुद्रा ।[1]

"परियार के साथ-साथ" यात्रा वृत्त में भारत भूमि की महिमा "बहुत पहले से मेरे मन में यह घर किया हुआ है कि एक नहीं कई जीवनों की पर्यटक पिपासा मिटाने की सामर्थ्य भारत भूमि में है । हम बेकार ही विदेश पर लार चुआते रहे हैं - क्या नहीं है भारत भूमि में ......।[2]

इस प्रकार कुछ स्थल और भी उदाहरण के लिए प्रस्तुत किए जा सकते हैं ।

3- **मिश्रित भाषा** -

कहानियों-उपन्यासों की भाषा की भाँति ही मिश्रजी के यात्रा वृत्तों की भाषा खिचड़ी बन गई है । इसमें भी लोक प्रचलित शब्दों को, जो किसी भाषा के क्यों न हो, सहज अपना लिया गया है । इस भाषा के कुछ उद्धरण प्रस्तुत हैं -

"......पैसे लेते ही हम किसी कैंटीन में जाकर जम जाना चाहते थे,...... लेकिन हमें वहीं एक राउंड टेबल पर बैठा दिया गया, जहाँ थोड़ी देर में आयी हमारी प्रोग्राम अफसर बैल विल्की - सुंदरता में साधरणता से थोड़ा ऊपर जवानी के पार खिसकती हुई उम्र, खूबसूरत आँखें और दाँत, कमीज और स्कर्ट पहने हुए लड़कों जैसे बाल ।"[3]

1- "झूलती जड़ें" - पृ0 58.
2- वही, पृ0 89.
3- "धुँध - भरी सुर्खी" - पृ0 6.

यहाँ कैंटीन, राउंड टेबल, प्रोग्राम-अफसर, स्कर्ट आदि अंग्रेजी भाषा के, जम जाना, जवानी, उम्र, खूबसूरत आदि उर्दू भाषा के शब्दों का प्रयोग हुआ है । एक और अच्छा सा उदाहरण -

"अपने बारे में इतना तो समझ ही चुका हूँ कि भावनाओं से बने छोटे-छोटे घरौंदे जहाँ खामोश बातचीत चलती रहती है.....वही ज्यादा सुकून देते हैं, ऐसे हल्ले-गुल्ले की अपेक्षा -

"किमपि मंदं - मंदं जल्पतोरक्रमेण......"

इस उद्धरण में जहाँ संस्कृत भाषा का वाक्यांश दिया है, वहीं खामोश ज्यादा, सुकून, हल्ले गुल्ले उर्दू भाषा के शब्द प्रयुक्त किए गए हैं ।[1]

एक और स्थल -

"दूसरे दिन से डेविड का पार्टीसिपेटिव ट्रेनिंग कोर्स । डेविड एक हीरो स्टाइल व्यक्ति । टाई की जगह रंगीन स्कार्फ गरदन में बाँधे हुए और च्युइंगम से अपनी चुस्ती पर और सान चढ़ाते हुए ..... कोट की जगह जर्सी । बहुत ही अनौपचारिक - "वैल जैंटलमेन व्हाट हैज बीन हैपनिंग हियर इज वैरी इन्टेस्टिंग..... हर लैक्चर की यहीं से शुरूआत । यों लैक्चर जैसा कुछ था भी नहीं ।"[2]

"झूलती जड़ें" पुस्तक में भी ऐसे नमूने मिल जाते हैं - यथा -

"हिल स्टेशन जैसी चक्करदार सड़क । पहाड़ियों की ऊँचाई में उठती फिर नीचे ढलान में उतरती हुई हरियाली । हर खुलक में घुसा पड़ा समुंद्र । एक ऊँचे टीले पर जहाँ टूरिस्ट होम, सर्किट हाउस और मेगापोट नेस्ट हैं, यहीं मुझे ठहरना है ।[3]

1- "धुंध-भरी सुर्खी" - पृ0 13.
2- वही, पृ0 45.
3- "झूलती जड़ें" - पृ0 28.

यहाँ पर भी हिल स्टेशन, टूरिस्ट होम, सर्किट हाउस नेस्ट आदि अंग्रेजी भाषा के, खुलक, ढलान जैसे उर्दू भाषा के शब्दों के साथ हिन्दी भाषा का प्रयोग हुआ है ।

एक अन्य स्थल पर भी देखिए -

"इम्फाल में मेरे दो साथी हैं - एक पुलिस में और एक आई० ए० एस० में । इन्सटीट्यूट की ट्रेनिंग में साथ थे । दोनों अपने परिवार यहाँ नहीं रखते, क्योंकि बच्चों की पढ़ाई के साधन नहीं है । पुलिस में जो है, उसे उबास घुटने लगी है यहाँ रहते-रहते, तबादले के इन्तजार में बैठा हुआ है । दूसरा बसु, जो मसूरी में मेरा रूम पार्टनर था - वह सामने जो समस्याएँ हैं उसमें डूबना उसके हल निकालना उसके "थ्रिल" को लेता है ।"[1]

शैली -

मिश्रजी के कहानी - संग्रहों और उपन्यासों में तो विविध शैलियों के दर्शन होते हैं किन्तु शास्त्रीय नियमानुसार यात्रावृत्तों में दो प्रकार की ही शैली दृष्टिगत होती है, ये प्रकार हैं- 1- वर्णनात्मक शैली और 2- विवरणात्मक शैली । किन्तु यत्र-तत्र व्यंग्यात्मकता का पुट भी प्रतिबिम्बित होता है । इस प्रकार मिश्रजी के यात्रावृत्तों में तीन प्रकार की ही शैली का प्रयोग देखा जा सकता है ।

1- **वर्णनात्मक शैली -**

इस शैली में किसी स्थान, दृश्य और वर्णनीय वस्तु का निरीक्षण के आधार पर आकर्षक सरस तथा रमणीय रूप में वर्णन किया जाता है । यथार्थ वर्णन को भी चित्रात्मक, सरल और सुबोध भाषा में प्रयुक्त किया जाता है । वस्तुतः गोविन्द मिश्र के यात्रा वृत्तान्त निरीक्षण का ही परिणाम और यथार्थ का चित्रण है । भाषा भी सहज, सरल, सरस और सुबोध

1- "झूलती जड़ें" - पृ० 126.

है, कहीं-कहीं चित्रात्मक भी हो गयी है, कतिपय उद्धरणीय स्थल यहाँ द्रष्टव्य हैं -

एल्पस पर्वत का दृश्य इसी शैली में प्रस्तुत किया गया है । "क्प्तान ने जब एल्पस पर्वत आ जाने का ऐलान किया, तो आँखें नीचे चली गयीं और काफी देर तक वहीं लगी रहीं । हिमालय की तरह ही भव्य पर्वत श्रृंखलाएँ......और छोर फैली हुई कहीं-कहीं चोटियों पर बर्फ का छिड़काव, दो पहाड़.......बीच में लबालब भरी हुई बादलों की नदी, फिर घने जंगल का विस्तार ।"[1]

नेशनल गैलरी आफ आर्टस का दर्शनीय वर्णन -

......."वहाँ दो घंटे जमकर नेशनल गैलरी आफ आर्टस देखी....स्कवैयर के ऊपर एक शानदार सफेद इमारत .....अंदर से भी इतनी विशाल कि चलते-चलते पैर दुःखने लगते हैं। दुनियाँ के मशहूर चित्रों के संग्रहालय होने के नाम पर ज्यादातार इटली, फ्रांस और जर्मनी के चित्र । सत्रहवीं सदी में हालैंड की पैंटिंग पर नुमाइश चल रहीं थी । कुल मिलाकर खासी बड़ी गैलरी है - शुरू के क्लासिक्स से बैन गौरा और फ्रांस के इम्प्रैशनिस्टिक स्कूल तक के चित्रकार हैं - चित्रों के बारे में बताने के लिए एक मढ़ा हुआ छोटा सालेख भी हाल में रखा है ।"[2]

कीट्स ग्रूव का वर्णन -

"टैविस्टौक इंस्टीट्यूट से ही अपराहन में हम कीट्स ग्रूव चले गए । यहाँ कीट्स का मकान है जहाँ उसके करीब दो वर्ष बीते थे । घने पेड़ों से ढ़का हुआ इलाका । जिस गली में कीट्स का मकान है वह तो करीब-करीब दरख्तों से मुंदी हुई है । बगल में ही बड़ा हैमस्टैंड पार्क है । यहाँ रहने वाला प्रकृति से कैसे अछूता रह सकता है ।"[3]

1- "धुँध - भरी सुर्खी" - पृ0 4.

2- वही, पृ0 22.

3- वही, पृ0 32.

और एवन नदी के तट पर बसा हुआ महान कवि शेक्सपीयर का जन्म-स्थल उसका वर्णन -

"कस्बे में घुसते ही एवन नदी के दर्शन और जैसे एका एक ही शेक्सपीयर साहित्य की छायाएँ इर्द-गिर्द गुनगुनाती सी फिरने लगीं । सबसे पहले शेक्सपीयर के जन्म स्थान पर उतरे । डिकिंस ने इस जगह को स्मारक का रूप देने में पहल की थी । हेनले स्ट्रीट पर आधा पत्थर और आधा लकड़ी से बनी यह इमारत पहले जैसी ही सुरक्षित रखी गयी है । नीचे बैठक की लकड़ी की दीवारों और टूटा हुआ पत्थरी फर्श जो शेक्सपीयर के ही जमाने का कहा जाता है ।......[1]

एक प्रदर्शन - भवन का दृश्य कितना चित्रात्मक है -

"सड़क पार कर हम प्रदर्शनी - भवन के छोटे चौराहे पर आ निकले । वहाँ रंग-बिरंगे फुब्बारे चल रहे थे । सामने बूथम-बार गेट था - प्रिंसिपिया के मुख्य फाटक पर बना एक बड़ा दरवाजा । फब्बारों के सामने सड़क पार एक आधुनिक थियेटर था - बाहर की तरफ काँच की दीवारें । आगे चलकर उस नदी पर वह खूबसूरत पुल मिला, जिस पर से स्टेशन से आते वक्त गुजरना हुआ था ।"[2]

क्वींस हाउस, टावर ऑफ लन्दन वगैरह का वर्णन भी बड़ा ही रोचक बन पड़ा है । देखिये कुछ पंक्तियाँ -

"क्वीन्स हाउस टावर आफ लन्दन का मशहूर हिस्सा है । 1880 तक इसे लेफ्टीनेंट का निवास के नाम से जाना जाता था । 1530 के आस पास बनी यह इमारत एक जमाने में षडयन्त्रकारियों की सवाल-जबाबी के लिए इस्तेमाल की जाती थी । यहीं के एक

1- "धुँध-भरी सुर्खी" - पृ0 75.

2- वही, पृ0 84.

कमरे में एन्न बोलेन ने अपने जीवन के अन्तिम दिन बिताए थे । पश्चिम की तरफ का हिस्सा ही एलिजाबेथ वाक है । क्वीन्स हाउस के मुख्य दरवाजे से ही 1716 में लार्ड निथ्य डेल सर उड़ा दिये जाने के एक दिन पहले जनानी पोशाक में निकल भागा था । × × × × लंदन की टावर में ऐसी कितनी दर्दनाक कहानियां छिपी पड़ी हैं ।[2]

और - " व्हाइट टावर किले का सबसे पुराना हिस्सा है । इसे यूरोप की सबसे पुरानी इमारतों में से एक कहा जाता है । बाहर से चौकोर दिखता है लेकिन चारों तरफ से ऊँचाई में फर्क है । 1241 में यह हैनरी तृतीय का महल था । फ्रांस कैम्ब्रिज पुस्तकालय गया.....भव्य और विशाल इमारत ।......[2]

पूरी पुस्तक में ऐसे अनेक दर्शनीय स्थलों एवं घटनाओं का वर्णन मिलता है जहाँ इस शैली का प्रयोग हुआ है, जैसे टैविस्टौक इंस्टीट्यूट, बुडलैंड फार्म हाउस, पैलेस आफ धन, वकिंघम पैलेस, पेटीकोट लेन मार्केट - रगवी, आक्सफोर्ड, इंडिया हाउस, किलमारनौक, कैथीड्रल चर्च, बैगार शहर, विश्वविद्यालय, हाली रूड़ हाउस, वेल्स की राजधानी - कार्डिफ आदि ।

"झलती जड़ें" पुस्तक में भी इस शैली के अनेक उदाहरण मिल जाते हैं । घोटपाल गांव के मेला (मड़ई) का दृश्य देखिए - ...... उनके (गीदम के बी0डी0ओ0 के) सुझाव पर हम कोई 13 किलोमीटर के फासले पर घोटपाल गाँव में मड़ई (मेला) देखने निकल पड़ें । मड़ई बस्तर के आदिवासियों के लिए एक विशेष अवसर होता है, जब दूर-दूर गाँवों से आदिवासी दो-तीन दिनों के लिए एक जगह इकट्ठा होते हैं, वहीं खाते, पीते, सोते और नाचते गाते हैं और मेला उठने पर अपने घरों को लौटते हैं ।"[3]

1- "धुँध-भरी सुर्खी" - पृ0 124

2- वही, पृ0 124-125.

3- "झूलती जड़ें" - पृ0 13.

अंडमान सागर का दृश्य -

"अगले दिन अन्तर्द्वीपीय पानी के जहाज से निकोबार के लिए चल दिया । अंडमान सागर-गहरा नीला पानी । उड़ने वाली मछलियां झुंड की झुंड उड़कर इधर से उधर जाती हुई, एक दम गौरैयों की तरह । एक जगह डाल्फिन की भी झलक - डाल्फिन जो आदमी की अच्छी दोस्त होती हैं ।"[1]

श्रीनाथ जी के मंदिर में श्रीकृष्ण के बालस्वरूप की झाँकी "श्रीनाथजी में भगवान श्रीकृष्ण के बालस्वरूप की भावना साकार है । इसलिए मंदिर अब भी खपरैल का है - जैसे कि नन्दबाबा की हवेली हो । लेकिन सादगी यहीं तक है । आगे अष्टायामी पूजा (मंगला से शयन तक), हर दर्शन में नया श्रृंगार, नया भोग, नया गायन और नया कीर्तनकार, हर मौसम के लिए प्रभु की अलग-अलग वेश भूषा, हर मास के विशेष उत्सव, नन्द महोत्सव, कान्हजगाई, अन्नकूट आदि । ये सब इतने विविध हैं कि सारा कुछ समझना मुश्किल है ।...."[2]

पंचमढ़ी नगर का दृश्य - आँखों देखा दृश्य -

"छोटी खूबसूरत सी नगरी है पंचमढ़ी । ऊँचाई ज्यादा नहीं है, समुन्द्र की सतह से लगभग एक हजार मीटर मात्र । कैंटोनमेंट एरिया है, इसलिए शायद इतनी व्यवस्थित । चारों तरफ पहाड़ियां ..... साफ-सुधरी, पतली-पतली सड़कें और बीचें बीच कहीं नहर, कहीं झील कहीं नदी का अहसास देता एक झरना सा । दो तीन जगहों पर पानी के इधर से उधर निकास के लिए छोटी-छोटी पुलियां सी बनी हैं । दोनों ओर छितरे हुए पुरइन के पत्ते, रंग-बिरंगे कमल, नील कमल भी । एक किनारे एक बड़ी सी झील उसी तरफ एक बड़ा बाग और एक पुराना चर्च ।[1]

1- "झूलती जड़ें" - पृ0 32.

2- वही, पृ0 50.

3- वही, पृ0 64.

2- **विवरणात्मक शैली -**

इस शैली का प्रयोग प्रायः ऐतिहासिक स्थानों, दृश्यों, यात्राओं तथा जीवन के विविध कार्यकलापों के विवरण में किया जाता है । इसमें आंख्यानात्मकता का पुट रहता है तथा विषय-वस्तु के प्रत्येक अंश का विवरण सुसम्बद्ध रूप में रोचकतापूर्वक किया जाता है । शैली में सरलता, भावानुकूलता, व्यावहारिकता और चित्रात्मकता होती है । मिश्रजी के यात्रापरक निबन्ध इसी शैली में लिखे गए हैं । इस शैली के कुछ उदाहरण यहाँ दर्शनार्थ प्रस्तुत किए जा रहे हैं -

तेहरान हवाई अड्डे का दृश्य और लेखक की मन स्थिति - "तेहरान में सुबह । बाहर निकलने की मनाही थी । अंदर से ही देखते रहे । चारों तरफ पहाड़ियां, छोटे-छोटे पेड़, एयरपोर्ट की छोटी सी इमारत । लोग बाग जहाज में ही टहल टहल कर अपनी थकान मिटा रहे थे । मैंने सोचने की कोशिश की कि कैसा लग रहा था । भारत पीछे छूट गया है.....परिवार और अपना समाज भी । सामने नया कुछ खुलता नहीं दिखता । अजीब सी मनःस्थिति जब न हम पीछे होते हैं, न आगे ही - न पीछे कुछ छोड़ आने की पीड़ा ही और न नये के लिए कोई आशंका, एक दम खाली-खाली ।[1]

और लन्दन के हवाई अड्डे पर उतरते समय की स्थिति एवं आख्यानात्मकता - "8.30 बजे शाम लन्दन हीथ्रो हवाई अड्डा - बादलों से ढका हुआ । हवाई जहाज गैलरी से सटकर खड़ा हुआ - बस या पैदल चलकर अन्दर पहुँचने की बजाय एकदम अन्दर ही उतर लीजिए । आप्रवासियों के लिए एक लाइन, छोटी-मोटी पूछताछ-क्यों आये हैं, कब जायेंगे अच्छा स्वागत है, आते ही यही चक्कर कि जाओगे कब......कस्टम्स तो जैसे था ही नहीं । ब्रिटेन को आपके वापस जाने के अलावा और कोई चिन्ता ही नहीं । हवाई अड्डे से शहर की तरफ बस में, रास्ते में एक तरफ पुराने किस्म के मकान, एक तरफ नये । काफी लंबा रास्ता बस में दूसरे साथी भी मिल गए थे जो जम्बों में अलग-अलग हो गए थे ।[2] विक्टोरिया-

---

1- "धुंध-भरी सुर्खी" - पृ0 4.

2- वही, पृ0

टर्मिनल पहुँचकर थोड़ी देर विक्षिप्त का माहौल रहा । हमें पता ही नहीं था कि कहाँ जाना है : और जो ब्रिटिश का काउंसिल का आदमी था वह जैसे खुलकर बताता ही नहीं था । उसे उलझन हो रही थी कि हम में से कोई न कोई उठ-उठकर बार-बार पूछ रहा था, जबकि वह चाहता था कि हम चुपचाप बैठें और इन्तजार करें ।.....[1]

लन्दन स्थित पार्लियामेन्ट इमारत और टेम्स नदी का दृश्य कितना चित्रात्मक बन पड़ा है, मानों सारा दृश्य आँखों के सामने हो - ".....एक शाम वैस्टमिनिस्टर की तरफ़ निकल गए । पहले ट्रैफाल्गर स्कावयर शाम की भीड़ और कबूतरों के बीच.....उसके बाद व्हाइट हॉल से होते हुए वैस्टमिनिस्टर ब्रिज पर । बगल में पार्लियामेन्ट, तेशानियों में । पार्लियामेन्ट की यह इमारत बहुत ही खूबसूरत लगती है......है भी शायद लन्दन की सबसे अच्छी इमारत । नीचे बहती टेम्स, उसमें छाया फैंकती हुई पार्लियामेन्ट । इधर-उधर दोनों तरफ दूसरे पुलों की रोशनियाँ ।"[2]

आइफिल टावर और सेन नदी पर बसा पेरिस शहर, कितना सुसम्बद्ध चित्रमय वर्णन किया है लेखक ने कि आख्यानात्मकता और भावानुकूलता भी दृष्टिगत होती है - देखिये -

"आईफिल टावर एक विशाल मीनार है लोहे की, कुतुबमीनार जैसी । लेकिन कुतुबमीनार में अगर इतिहास एक-एक ईंट से उभरकर आता है तो यहाँ आधुनिकता और बनावटीपन । मीनार से ज्यादा आकर्षक मुझे उसके सामने का मैदान लगा, जहाँ रास्ते को दोनों तरफ से घेरे हुए डिजाइनदार ढूँढ़ खड़े हुए थे - बड़े ही चित्रमय । जब इन दरख्तों पर पत्तियाँ होती होंगी और चारों तरफ पुल.....या कि फिर बर्फ ही बर्फ......सफेदी..... तब दृश्य और भी आकर्षक होता होगा । आइफिल टावर के ऊपर लिफ्ट से पहली मंजिल तक गये । वहाँ रेस्तराँ, बार वगैरह बसाकर एक छोटी सी दुनियाँ बैठा दी गयी है । नीचे

1- "धुँध - भरी सुर्खी" - पृ0 5.

2- वही, पृ0 16.

फैला हुआ पेरिस शहर । सेन नदी भी दिखती है, काफी दूर तक । ऊपर हवा बहुत तेज थी । हम जल्दी ही नीचे आ गये । सामने के यों दियना के पार महल जैसी एक अर्द्धवृत्ताकार इमारत.......पैले दो शैली । बड़ा खूबसूरत इलाका बन जाता है, यह कुल मिलाकर ।[1]

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम सन् 1858 की ऐतिहासिक घटना का विवरण प्रस्तुत करता यह अनुच्छेद द्रष्टव्य है जो मानो आप बीती सुना रहा है -

"वापसी के एक दिन पहले पोर्ट ब्लेयर के पास के एक-दो गांवों में जाने का मौका मिला । अंग्रेजों ने द्वीपों के बसाने के ख्याल से कैदी स्त्रियों और पुरूषों को विवाह करने की छूट दे दी थी । उन्हीं लोगों की दूसरी तीसरी पीढ़ियां आज इन गांवों में हैं । गांवों में पक्के घर हैं और बिजली भी है । हरियाणा के एक अध्यापक महोदय रिटायर होने के बाद यहीं आ गये और अब शिक्षकों को पढ़ाने की आधुनिक विधि मुफ्त बताते घूमते रहते हैं । बोले कि वहाँ रहकर सड़ता ही, यहाँ अपने जीवन का कुछ उपयोग तो कर रहा हूँ । एक पुराने सज्जन आल्हा बाँचते सुने जाते थे । मेरे बांदा का होने की सुनते ही वे उचक पड़े, "बांदा का बच्चा है तू ? "अंदमान तो बसाया ही बाँदा वालों ने । 1 मार्च 1858 को कैदियों का जो पहला जत्था यहाँ उतरा, उसमें बांदा के वीर सबसे ज्यादा थे - खद्दे लछमन मत्तू सिंह, जसवीर सिंह ..... मुसई सिंह तो थे ही ।[2]

आख्यानात्मकता लिए एक और स्थल - गुरूवायोर का मन्दिर - "गुरूवायोर करीब सात बजे पहुँचे । इस मन्दिर की प्रतिष्ठा तिरूपति से थोड़ी ही नीचे हैं । ऐसी मान्यता है कि इस मंदिर में प्रतिष्ठापित विग्रह वही है जो विष्णु ने ब्रह्मा को दिया,

---

1- "धुँध-भरी सुर्खी" - पृ0 178.

2- "झूलती जड़ें" - पृ0 39.

ब्रह्मा ने कश्यप मुनि को । कश्यप और उनकी पत्नी ने वसुदेव और देवकी के रूप में अवतार लिया था । उनसे हुए कृष्ण जिन्होंने द्वारका में ही इस विग्रह की पूजा की थी । जब द्वारका के डूब जाने की बात थी और कृष्ण भी जाने लगे, तब उन्होंने उद्धव से कहा कि गुरू (वृहस्पति) और वायु की सहायता से इसे उपयुक्त क्षेत्र में प्रतिष्ठित करो । तो गुरूवायोर मंदिर । मंदिर उतना विशाल और भव्य नहीं है जितने दक्षिण के दूसरे मंदिर । उल्टे सादगी है । इसलिए शान्ति भी है ।"[1]

इस प्रकार कुछ और भी स्थल इस शैली में लिखे मिल जाते हैं मिश्रजी के इन यात्रावृत्तों में ।

3- **व्यंग्यात्मक शैली** -

इस शैली में एक प्रकार का व्यंग्य भरा होता है । अधिक तो नहीं एकाध स्थल पर इस शैली का भी प्रयोग मिश्रजी ने किया है यथा - विदेश लौटने को भारत में स्टेटस का प्रतीक माना जाता है और परिचय में विदेश से लौटा हुआ (Foreign Return) कहकर परिचय दिया जाता है और बड़ा गौरव व सम्मान सूचक माना जाता है, देखिये मिश्रजी का व्यंग्य -

"हिन्दुस्तान में विदेश जाना स्टेटस का प्रतीक माना जाता है । जाने के कितने ही दिनों पहले से आदमी को रश्क से देखा जायेगा और लौटने के बाद काफी अर्से तक उसका हर सभा में परिचय देते समय एक पुछल्ला जरूर जोड़ दिया जायेगा कि अभी हाल ही में यूरोप से लौटे हैं ।"[2]

1- "झूलती जड़ें" - पृ0 94.

2- "धुँध-भरी सुर्खी" - पृ0 1.

इंग्लैण्ड में बसे भारतीयों की मनः स्थिति पर व्यंग्य द्रष्टव्य है - "चलो अच्छा हुआ । इंगलिस्तान में बसे अपने इन भाई-बंधुओं को भी देख लिया, उनकी असलियत में । सूट और कार से उनके जीवन इतने बंध गये हैं कि हिन्दुस्तान जाने के ख्याल से ही उन्हें डर लगता है......बगैर सूट और कार के बेचारे कैसे जीयेंगे ? यहाँ रहते हैं तो सहमे-सहमे, पता नहीं कब अपनी दौलत समेट फेंके जाएँ । × × × × × इंग्लैण्ड की नम और साफ जमीन पर बसी हिन्दुस्तानियों की ये बस्तियाँ तब एक दम गंदे पोखरों सी महसूस हुई जहाँ ये भगोड़े मच्छरों की तरह भनभनाते हैं, एक दूसरे पर किट किटाते हैं ।[1]

आदिवासियों के दो रूप व्यंग्यात्मक शैली के अच्छे उदाहरण हैं - "मेरे सामने तब आदिवासियों की दो तस्वीरें थीं - एक लवमी, शून्य......निर्विकार, दूसरा जोगा, बेचैन, अपनी परेशानी में तड़पता हुआ । पहली शायद उन आदिवासियों की प्रतिनिधि, जिन्हें हमारी समता अभी तक छू नहीं सकी, दूसरी तसवीर उस वर्ग की जो हमारी सभ्यता की आँच में झुलसने लगा है अब ।"[2]

काम-पिपासा पर एक वाक्य ही व्यंग्यात्मक बन पड़ा है -

"तो ये शहरी भाई यहाँ सुदूर जंगल में भी कोठेबाजी का भ्रष्टाचार फैलाने में कामयाब हो गए ।"[3]

पटेल साहब के द्वारा रूपये मांगने पर -

"हम चलने लगे, तो पटेल सबकी तरफ से रूपये मांगने लगे । मुझे अफसोस हुआ - हमारा सम्पर्क कैसे इन्हें करीब-करीब भिखारी बनाता जा रहा है । प्रकृति के इतना पास..... फिर भी जैसे छुआछूत से हमारी बीमारी इन लोगों में भी घर करती जा रही है । छटपटाहट.....।[4]

1- "धुंध-भरी सुर्खी" - पृ0 61.
2- "झूलती जड़ें" - पृ0 16.
3- वही, पृ0 19.
4- वही, पृ0 22.

मेवाड़ (राजस्थान) क्षेत्र के आदिवासी भीलों के घटते प्रभाव और हमारी बढ़ती हवस पर व्यंग्य देखते ही बनता है -

"भील, जो कि कभी इस इलाके का मालिक था, आज इन गाड़ियों के सामने बौना पड़ गया है । कभी इलाके की संपदा केवल उसी की थी, कोई कुछ बाहर नहीं ले जा सकता था, अब कुछ भी कहाँ से कहाँ ले जाने वाली सड़कें हैं - और उन पर हर समय दौड़ती आदमी की हवस......हर चीज पैसे से परिवर्तित करने वाली हवस । हमारे जंगल, हमारे पेड़, इसी हवस का तो शिकार हुए हैं ।[1]

आजकल के डाक बंगलों की स्थिति, रख-रखाब और कर्मचारियों की लापरवाही पर व्यंग्य भी देखिए -

"गया वह समय जब खानसामा संस्कृति थी, अब खानसामा भी बेचारा क्या करे - कैसे भरे घर में बैठे प्राणियों का पेट, अब जो डाक बंगले में ठहरने वाले हैं, वे भी पुराने अंग्रेजों की जगह मुझ जैसे भुखमरे होते हैं .....।[2] और - मेरे साथी ने बताया कि वैसे भी ये लोग दिन भर की कमाई में थक जाते हैं और शाम होते ही नशे की दुनियाँ में पहुँचकर बाहर की दुनियाँ को खारिज कर देते हैं । यह उनका तजुर्बा है ।"[3]

इस प्रकार मिश्रजी के यात्रावृत्तों की शैली भी विविधता-मयी है जो कहीं-कहीं अलंकृत भी हो गयी है और यह वर्णन स्वाभाविक ही बन पड़े हैं ।

निष्कर्ष -

अब तक मिश्रजी के तीन यात्रावृत्त-"धुँध-भरी सुर्खी", "दरख्तों के पार...शाम" और "झूलती जड़ें" प्रकाशित हो चुकी हैं । इनमें "धुँध-भरी सुर्खी" और

1- "झूलती जड़ें" - पृ0 42.
2- वही, पृ0 62.
3- वही, पृ0 74.

"दरख्तों के पार......शाम", विदेश यात्रा पर तथा "झूलती जड़ें" भारतीय अंचलों की स्वदेशी यात्रा पर लिखी गयी पुस्तकें हैं ।

"धुंध-भरी सुर्खी" में गोविन्द मिश्र के त्रि-मासिक ब्रिटेन प्रवास और यूरोप की यात्रा का लेखा जोखा है । समाज और व्यक्तियों के अतिरिक्त इस पुस्तक में अनेक सुरम्य स्थलों के भी रोचक एवं सजीव वर्णन हैं । अपने तीन माह के पश्चिम प्रवास के दौरान मिश्रजी ने जो अनुभव किए हैं, उन्हें बड़ी सफाई और संवेदना के साथ इस पुस्तक में समेटा है लेखक का निष्कर्ष है कि पश्चिम में सुर्खी तो है, लेकिन वह आयी हुई आँखों की, मिचमिची और रक्ताभ सुर्खी है - मार्मिक लगता है । सामयिक स्तर पर दो जातियों एवं दो संस्कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन भी प्रस्तुत किया गया है । लेखक अपने साथ भारतीय संस्कारों की तस्वीर लेकर उन्हें विदेशियों से मिलता रहा है । इस विषय में मृणाल पांडे ने टिप्पणी की है - "दरअसल इंग्लैण्ड और हिन्दुस्तान का यह प्यार और नफरत का दोहरा रिश्ता हमारी एक ऐसी ऐतिहासिक विरासत है जिससे न अभी हम पूरी तरह मुक्त हो सके हैं न ही वे ।"

"धुंध-भरी सुर्खी" यात्रावृत्त की कुछ उपलब्धियाँ और विशेषताएँ भी हैं । जहाँ यह एक रोचक यात्रावृत्तान्त है, वहीं मिश्रजी ने अंग्रेजी और हिन्दुस्तानी दो कोमों को समझने की भी चेष्टा की है । ब्रिटेन और बेल्स, फ्रांस जैसे देशों के प्रसिद्ध नगरों (शहरों), नदी, समुद्र तटों तथा ऐतिहासिक स्थलों का भी सुन्दर वर्णन प्रस्तुत किया है । अपने यात्रा प्रवास के दौरान अनेक प्रसिद्ध लेखक संस्थानों से भी सम्पर्क साधा है । जहाँ कुछ कारूणिक दृश्यों के शब्द चित्र प्रस्तुत किए हैं, वहीं यात्रावृत्त को रोचक बनाते हुए श्रृंगार परक स्थलों का भी रोचक वर्णन प्रस्तुत कर दिया है ।

सामान्य मिश्रित भाषा के साथ-साथ वर्णनात्मक, विवरणात्मक और व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग हुआ है ।

"दरख्तों के पार......शाम" यात्रावृत्त "इंडियन कांउसिल ऑफ कल्चरल रिलेशंस के तत्वावधान में किया गया यूरोपीय देशों का दौरा है, ये देश हैं पश्चिम जर्मनी, आस्ट्रिया, चैकोस्लोवाकिया और हंगरी । बीच में पूर्वी जर्मनी का झरोखा दृश्य भी आ गया है। यात्रावृत्त एक विवेकशील सुसंस्कृत भारतीय की, समूची पश्चिमी संस्कृति पर खोजपूर्ण टिप्पणी के रूप में उभरता है । प्रारंभ हुआ है पश्चिम जर्मनी से और अन्त हुआ है हंगरी में । यह यात्रा दौरा इस मामले में एक उपलब्धि भी है कि आदमी घुसे तो ठेठ पूँजीवादियों के बीच और निकले लाल चौगड्डों के बाहर से । तो दोनों चीजों के मिलान की नियति तो बेचारे दर्शक को स्वतः सौंप दी जाती है । मिश्रजी न तो कम्यूनिस्ट (साम्यवादी) है और न ही पूँजीवादी, इसलिए यह मिलान कहीं और अधिक निखरकर सामने आया है :-

"झूलती जड़ें" स्वदेश के विभिन्न अंचलों में की गई यात्रा पर आधारित पुस्तक है यह छः भारतीय अंचलों का वास्तविक इतिवृत्त है । प्रथम यात्रा निबन्ध में मध्य प्रदेश के बस्तर जिले के प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन करते हुए आदिवासीजन जातियों के जीवन तथा रहन-सहन पर प्रकाश डाला है । दूसरे यात्रा वृत्त में अंडमान-निकोबार द्वीप-समूह की प्राकृतिक छटा समुद्र तटीय दृश्य, स्वतंत्रता सेनानियों द्वारा बसायी गयी बस्तियों और यहाँ की संस्कृति को उभारा गया है तृतीय वृत्त में राजस्थान के मेवाड़ क्षेत्र और वहाँ के श्रीनाथ द्वारा के मंदिरों की भव्यता के साथ हल्दी घाटी से सम्बद्ध वीरता के अवशेषों का स्मरण करते हुए यहाँ की विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है । "शर्मीला सतपुड़ा" शीर्षक के अन्तर्गत पंचमढ़ी, तामिया, धुमगढ़ और महादेव स्थलों की प्राकृतिक सुन्दरता, गुफाओं, नदियों, जंगलों के वर्णन के साथ यहाँ के डाक बंगलों और आदिवासियों के जन-जीवन को समझने की कोशिश की गई है । पाँचवे यात्रावृत्त में केरल प्रान्त की प्रसिद्ध नदी पेरियार के माध्यम से वहाँ के वातावरण और संस्कृति को प्रकट किया गया है तो छठे वृत्त में पूर्वोत्तर भारत के

राज्यों असम, अरूणाचल, मेघालय, नागालैंड आदि के प्राकृतिक सौन्दर्य के साथ वहाँ की जनजातियों की संस्कृति का उल्लेख करते हुए इस पूर्वांचल की कुछ प्राकृतिक विशेषताओं का भी विवरण दिया गया है ।

आदिवासी जनजातियों की संस्कृति, उनकी जीवन-शैली, रहन-सहन, परम्पराओं पर लेखक ने इस यात्रावृत्त में पर्याप्त मात्रा में प्रकाश डालने की चेष्टा की है । आदिवासी लोग जहाँ अपनी पुरातन परम्पराओं के कट्टर समर्थक हैं, वहीं वे अब आधुनिक विकास और सभ्यता से भी परिचित होते जा रहे हैं । जहाँ वे निर्मल और निर्दोष स्वभाव वाले हैं, वहीं आधुनिक सभ्यता का सम्पर्क उन्हें दूषित भी करने लगा है ।

इस यात्रावृत्त की भी भाषा मुख्यतः सामान्य, सरल और मिश्रित है तथा लोक-प्रचलित भाषा के भावों के अनुरूप हैं, शैली भी वर्णनात्मक और विवरणात्मक होने के साथ-साथ व्यंग्यात्मक भी हो गई है ।

कुल मिलाकर मिश्रजी के तीनों ही यात्रावृत्त अत्यन्त यथार्थ, सजीव, प्रभावपूर्ण, मनोरंजक और दिलचस्प बन पड़े हैं । वे यात्रावृत्त ही नहीं साहित्यिक कृतियाँ भी हैं । इस यात्रा - साहित्य में उनके गहन अनुभव भी समाहित हैं ।